समर्पण

यह तुच्छ भेट

पूज्यपाद पिताजी महाराज

स्वर्गीय पं० जगन्नाथदेव शर्मा

के

चरण-कमलों

में

लेखक

द्वारा

अत्यन्त भक्ति-श्रद्धा-पूर्वक, सादर

समर्पित है।

नन्दकुमारदेव शर्मा

निवेदन।

इतिहास जातीय जीवन है। राष्ट्रों के गिरने-पड़ने, उठने और सम्हलने का पता केवल इतिहास से ही लगता है। इतिहास "त्रिकालदर्शी आइना" है। सिर्फ इतिहास विज्ञान के अतिरिक्त इस दुनिया में ऐसा और कोई विज्ञान नहीं है जिससे जातियों और देशों की भूत और वर्त्तमान परिस्थिति का परिचय प्राप्त हो सके; भूत और वर्त्तमान परिस्थिति पर विचार करके भविष्य में होनेवाले भले-बुरे का विचार कर सकें। इतिहास-विज्ञानवेत्ता ही ऐसी जटिल उलझनों को समझने में समर्थ होते हैं। किसी देश की भूत और वर्त्तमान घटनाओं को लेकर न केवल इतिहास-विज्ञानवेत्ता उस देश का ही भविष्य अनुमान करते हैं, परन्तु यहां तक अपनी बुद्धि दौड़ाते हैं कि उस देश की वर्त्तमान परिस्थिति का प्रभाव उसके आसपास पड़ोसी देशों पर क्या होगा। यही कारण है कि यूरोप का महाभारत होने से कई वर्ष पहले इतिहास की केवल पुरानी घटनाओं और वर्त्तमान परिस्थिति को देख कर कितने ही विद्वानों को यह अनुमान हो गया था कि किसी समय यूरोप में महासंग्राम अवश्य चलेगा। इस विषय की पहले कितनी ही पुस्तकें छप गई थीं। इसी लिये इतिहास को साहित्य का एक आवश्यक अङ्ग कहा जाता है। जिस साहित्य-सरोवर में

इतिहासरूपी सरोज नहीं है वह साहित्य, साहित्य नहीं कहा जा सकता है। जिस तरह से एक सुन्दर सरोवर में खिला हुआ कमल दर्शकों के खिन्न और मलिन चित्त को प्रफुल्लित कर देता है वैसे ही साहित्यरूपी सरोवर में इतिहासरूपी कमल न केवल पाठकों के खिन्न और मलिन चित्त को प्रसन्न ही करता है, किन्तु सञ्जीवनी शक्ति का भी सञ्चार कर देता है। जो जातियां मरने के लिये सिसक रही हैं, उनके लिये इतिहास रामबाण ओषधि है।

जैसे नेत्रों में किसी प्रकार का विकार हो जाने पर सुरमा तथा अन्य ओषधियों के आंखों में आंजने की जरूरत हुआ करती है वैसे ही हृदय के अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिये इतिहास ज्ञानाञ्जन-शलाका है। जिस भांति एक पहाड़ की चोटी पर चढ़ने के लिये लकड़ी के सहारे की आवश्यकता हुआ करती है, वैसे ही उन्नति के शिखर पर चढ़ने के लिये इतिहासरूपी सहारे की आवश्यकता है। पर दुःख है कि हमारी हिन्दी भाषा के विद्वानों का ध्यान ऐतिहासिक ग्रन्थों के लिखने की ओर बहुत कम गया है। यद्यपि हिन्दी भाषा में ऐतिहासिक ग्रन्थों का अभाव नहीं है, तथापि जितनी पुस्तकें किस्से-कहानी की प्रकाशित होती हैं उतनी पुस्तकें इतिहास तथा अर्थशास्त्र की नहीं होती हैं। मेरा विचार बहुत दिनों से कुछ ऐतिहासिक ग्रन्थों को हिन्दी में प्रकाशित करने का हो

रहा है। बस, इस विचारवश ही यह क्षुद्र ऐतिहासिक भेंट पाठकों की सेवा में उपस्थित है।

इस लघु पुस्तिका में, सन् १८१५ से १८७० तक इटली-निवासियों ने अपनी खोई स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये जो द्वन्द्व किया था, जो चेष्टाएं की थीं, जो कष्ट सहन किये थे, उन्हीं के सम्बन्ध मे अनेक पुस्तकों से कुछ घटनाएं चुन कर अपने ढङ्ग पर लिख दी गई हैं। यह लघु पुस्तिका किसी ग्रन्थ का अनुवाद नहीं है। देखना चाहिये कि इतिहासरसिक पाठकों को यह उपहार पसन्द आवेगा या नहीं। क्योंकि अनुवाद की अपेक्षा बहुतसी पुस्तकों से घटनाओं को चुनकर स्वतन्त्र रूप से लिखना कठिन और कष्टदायक है। इतिहास की पेचीली पहेलियों को बूझने में बड़ी मगज़पच्ची करनी पड़ती है। अनेक उलझनों को सुलझाने मे समय लगता है। यदि पाठकों ने ऐसे ऐतिहासिक निबन्धों को पसन्द किया तो मेरी इच्छा बहुत शीघ्र इस ढङ्ग के कई ऐतिहासिक निबन्ध पाठकों की सेवा में भेंट करने की हो रही है। इस छोटे से निबन्ध में जो कुछ भूल-चूक हुई हो, उसको पाठक क्षमा ही न करें, प्रत्युत लेखक को सूचित करने की भी कृपा करें, जिससे दूसरे संस्करण में उनका संशोधन कर दिया जायगा।

४२, शिवठाकुर लेन,
बड़ा बाज़ार, कलकत्ता।

निवेदक,
नन्दकुमारदेव शर्मा।

अनुक्रमणिका

—:•:—

———

इटली की स्वाधीनता

पहला परिच्छेद

प्रारम्भिक वचन

उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे ।
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः ॥

यूरोप में युद्ध के छिड़ते ही वहां के बड़े बड़े राजनीतिज्ञों के दिमाग़ में यह सवाल उठने लगा था कि इस कुरुक्षेत्र में इटली किसका साथ देगा ? वह जर्मनी और आस्ट्रिया की मित्रता निबाहेगा अथवा फ्रांस तथा इङ्गलेण्ड का पक्ष ग्रहण करेगा । इस विवादग्रस्त प्रश्न को लेकर यूरोप के राजनीतिज्ञों के दिमाग़ में दूसरा महाभारत होरहा था । वहां के संवादपत्रों में इस विषय को लेकर बड़े बड़े लेख निकल रहे थे। बड़ा वादविवाद हो रहा था । यद्यपि युद्ध के आरम्भ से ही इटली ने एक प्रकार से जर्मनी और आस्ट्रिया का साथ देने से किनारा कस लिया था, तथापि तब तक यह आशा नहीं हुई थी कि इटली इङ्गलेण्ड, फ्रांस और रूस का साथ देगा । परन्तु अन्त में इटली ने आस्ट्रिया और जर्मनी का साथ न देकर मित्र-त्रय (फ्रांस इङ्गलेण्ड और रूस) का साथ दिया और आस्ट्रिया और जर्मनी के विरुद्ध अस्त्र ग्रहण कर लिया । इटली के

सम्बन्ध में इस भांति चर्चा होने का कारण यह था कि इस युद्ध में इटली की परिस्थिति "इधर कुआ, उधर खाई" के समान थी। क्योंकि इटली का जब से स्वतन्त्र राज्य स्थापित हुआ था, तब से उसने पहले पर-राष्ट्रनीति कुछ भी स्थिर नहीं की थी। परन्तु कई प्रकार के चढ़ाव-उतार देखकर सन् १८७३ में आस्ट्रिया और जर्मनी के त्रिगुट (ट्रिपल एलाइन्स) में सम्मिलित हो गया था। इसी कारण इटली के सम्बन्ध में आन्दोलन हो रहा था।

यद्यपि जर्मनी और आस्ट्रिया के त्रिगुट में इटली सम्मिलित होचुका था, तथापि आस्ट्रिया और इटली की चिरकाल से शत्रुता चली आती थी, जैसा इस पुस्तक के पढ़ने से पाठकों को आगे विदित होगा। इटली का जर्म्मनी के साथ आस्ट्रिया के गुट में सम्मिलित होने का कारण जर्म्मनी के चाणक्य-बिस्मार्क की कुटिल नीति थी। बिस्मार्क को यह आशा थी कि वह जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली एवम् तुर्किस्तान और बालकन राज्यों को लेकर यूरोप में एक महाशक्ति का संगठन कर लेगा और जर्म्मनी का यूरोप में प्रभुत्व रहेगा। पर वह आशा पूरी न हो सकी। दूसरा कारण इटली का इस गुट में शामिल होने का यह भी था कि उसको फ्रांस से सदैव भय रहता था और रूस की बालकन नीति से वह सन्तुष्ट नहीं था। जर्मनी से मित्रता का एक कारण यह भी हुआ कि इटली दरिद्र देश है। उसे जर्मनी से व्यापार-वाणिज्य में बहुत सहायता मिली थी। इस प्रकार से जर्मनी ने इटली को अपने फन्दे में फँसा लिया था।

फ्रांस ने इटली का स्वाधीन राज्य स्थापन करने में

कभी तो आस्ट्रिया के पञ्जे से मुक्ति दिलाने में सहायता की थी, कभी इटली को दबाने के लिये रोम के पोप की पीठ ठोकी थी, तथापि स्वाधीन राज्य होने पर इटली की फ्रांस से मैत्री नहीं हुई। परन्तु इटली और फ्रांस दोनों बहुत सी बातों में मिलते-जुलते हैं। दोनों की भाषाओं की उत्पत्ति एक ही भाषा से है और भी कई प्रकार की एकता है। जर्मन चाणक्य—बिस्मार्क यह बात ताड़ गया था कि जब तक इटली और फ्रांस में वैरभाव उत्पन्न न किया जायगा, तब तक उसकी आशा पूर्ण नहीं होगी। इसलिये उसने बहुत से जोड़-तोड़ लगाकर इटली को अपने गुट में सम्मिलित कर लिया था। इधर इटली इङ्गलेण्ड का भी कृतज्ञ है। जिस समय उसने स्वाधीनता का द्वन्द किया था, उस समय इङ्गलेण्ड ने जो सहानुभूति प्रकट की थी, उसको इटली भूल नहीं सका; और इसीलिये यूरप की भयानक लड़ाई के छिड़ते ही इटली ने ब्रिटेन के साथ सहानुभूति दिखलाई। जर्मनी से भिन्नता होजाने पर उससे सन्तुष्ट न होने का कारण यह भी था कि वहां पर भी जर्मनी का प्रभाव दिन पर दिन बढ़ता जाता था। "गङ्गा आनेवाली और भागीरथ के सिर पड़ी" इस कहावत के अनुसार गत ट्रिपोली समर में जब जर्मनों ने रूम के साथ अपनी सहानुभूति प्रकट की, तब तो इटली जर्मनी से और भी अप्रसन्न हुआ। जर्मनी का रूम के साथ सहानुभूति दिखलाना—घाव पर नमक छिड़कने के समान हुआ। और तभी से इटली त्रिगुट-मण्डला से उदासीनता ग्रहण करता जाता था।

आस्ट्रिया से भी इटली के असन्तुष्ट होने का कारण यह है कि उसका बहुत सा सीमान्त प्रदेश आस्ट्रिया के अधीन है। ट्रीस्ट बन्दर, जो आस्ट्रियन व्यापार का केन्द्र है, वस्तुतः

इटली का है। ऐसे ही अनेक कारणों से इटली ने इङ्गलेण्ड का पक्ष लिया। इससे कोई कोई महानुभाव इटली पर सन्धिभङ्ग का दोष मढ़ते हैं; पर यह भूल है। इटली की सन्धि जर्मनी अथवा आस्ट्रिया से यह कभी नहीं थी कि वे जब कभी किसी राज्य पर आक्रमण करेंगे तब भी इटली उनका साथ देगा। इटली और जर्मनी की यह सन्धि थी कि जब कभी दो शक्तियां मिलकर किसी पर आक्रमण करेंगी तब दोनों में से एक दूसरे को सहायता देंगे—सो किसी ने भी जर्मनी पर आक्रमण नहीं किया था। पर जर्मनी स्वयं आक्रमण करने चला था। ऐसी दशा में इटली पर सन्धिभङ्ग का दोष लगाना सरासर अनुचित है। अस्तु। जो कुछ हो। इटली का मित्रों का साथ देना अच्छा ही हुआ। उससे इङ्गलेण्ड के साथ उसकी मैत्री और भी घनिष्ट हो जायगी।

दूसरा परिच्छेद

संक्षिप्त परिचय

(भौगोलिक वृत्तान्त, शिक्षा, धर्म, सैन्यबल, समुद्री शक्ति आदि का संक्षिप्त निदर्शन)

बङ्गसाहित्य-सम्राट बाबू बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय महाशय ने अपनी पुस्तक "विषवृक्ष" में कविकुल-मुकुटमणि कालिदास और एक मालिन की एक कथा लिखी है कि एक मालिन कविकुल-मुकुटमणि कालिदास के यहां नित्य आया करती थी और उनको फूल दे जाया करती थी। कालिदास थे दरिद्र ब्राह्मण। उनके पास मालिन को फूलों के बदले पैसे देने को नहीं होते थे। वे नित्य मालिन को फूलों के बदले अपनी कविता सुना कर प्रसन्न कर दिया करते थे। एक दिन मालिन सदैव की भांति फूल लायी। कालिदास भी अपने नित्य-नियम के अनुसार मालिन को अपनी कविता सुनाने लगे। उस दिन वे अपनी नवीन रचना मेघदूत मालिन को सुनाने बैठे। मालिन ने मेघदूत का कुछ प्रारम्भिक अंश सुना। पर उसका जी मेघदूत का प्रारम्भिक अंश सुनते ही ऊब गया। मेघदूत का प्रारम्भिक अंश कुछ नीरस होने के कारण मालिन को आनन्द नहीं आया। वह कहने लगी कि "कालिदास, मुझे तुम्हारी यह कविता अच्छी नहीं लगी।" इस पर कालिदास ने कहा—" मालिन, तुझे यह कविता चाहे अच्छी न लगती हो, पर आगे

इसमें बड़ी सुन्दर कविता है, तू ध्यान से सुन। इसका उससे सम्बन्ध है।" कालिदास के कहने पर मालिन कविता सुनने लगी। उसको वह कविता बड़ी पसन्द आई और दूसरे रोज मालिन बड़ी बढ़िया माला कालिदास के लिये लाई। न हम कालिदास हैं, न हमारी पुस्तक मेघदूत है, पर हमारे पाठक-पाठिकाओं में जो कालिदास की मालिन हों और जिनको "इटली की स्वाधीनता" का यह परिच्छेद नीरस प्रतीत होता हो उनसे हमारा निवेदन है कि वे चाहे भले ही इस नीरस परिच्छेद को छोड़ दें; परन्तु वास्तव में इटली के घर का कुछ हाल जानें बिना उसकी स्वाधीनता का पूरा परिचय नहीं मिल सकता है।

अपने मित्रों और पड़ोसियों के यहां के वृत्तान्त जानने की किसको इच्छा नहीं होती है? इटली भी इङ्गलेण्ड का मित्र होने के कारण भारतवर्ष का मित्र है। इसलिये हमको भी उसके यहां की कुछ बातों से परिचित होना आवश्यक है।

यूरप के मानचित्र (नक़शा) को देखने पर ज्ञात होगा कि उसके मध्य भाग में आल्प्स नाम की पर्वतमाला बहुत दूर तक चली गई है, जिसकी चोटी माउण्ट ब्लैङ्क १५,७३२ फीट ऊँची है। इस पर्वतमाला के बहुत से पर्वतों पर सदा बर्फ जमी रहती है। स्विटज़रलेण्ड के आल्प्स से लेकर अग्निकोण की ओर रूमसागर में बहुत दूर तक कुछ कुछ बूट अर्थात् जूते कासा जो आकार दिखलाई पड़ता है, वही इटली है। इसके ऊपर की ओर स्विटज़रलेण्ड और आस्ट्रिया है। पूर्व की ओर एड्रियाटिक सागर है। दक्षिण की ओर मेडिट्रेनियन समुद्र और फ्रांस देश है। दक्षिण की ओर आल्प्स पर्वतमाला का जो सिलसिला इटली में चला जाता है, उसको एपीनाइन्स कहते हैं। एपी-

नाइन्स की पर्वत-श्रेणी नीचे की ओर और इटली के मध्य तक चली गई है। जिसकी सब से ऊंची चोटी मोनटोकार्न ९,५७९ फीट है।

ज्वालामुखी पर्वत—इटली में एपीनाइन्स पर्वतमाला के अतिरिक्त कई ज्वालामुखी पर्वत हैं। जिनमें से विस्यूवियस, एटना और स्ट्रोमबोली विख्यात हैं। समय समय पर इन ज्वालामुखी पर्वतों से इटली की बड़ी हानि हुई है। कितने ही बार अनेक शहर और गांव के गांव इन ज्वालामुखी पर्वतों से नष्ट होगये हैं। वहां पहले समय में पोम्पियाई नगर बड़ा विख्यात था। ग्रन्थकर्ताओं और कवियों के जो वर्णन इस नगर के सम्बन्ध में मिलते हैं, उनसे तो यही ज्ञात होता है कि ज्वालामुखी पर्वत के फूटने से पहले यह नगर स्वर्गधाम और आनन्द-निकेतन था। सन् ७९ की २३वीं अगस्त को विस्यूवियस नामक ज्वालामुखी पर्वत अचानक फूट पड़ा, जिससे यह सुन्दर नगर नष्ट हो गया और सन् १७०९ तक किसी को इस नगर का कुछ पता न लगा। परन्तु सन् १७४८ में सवसाधारण का ध्यान इसके प्राचीन पदार्थों की ओर गया। तब से इसके पुराने चिन्हों की खोज सन् १८६० तक होती रही। उसके पश्चात् इटालियन गवर्नमेण्ट ने इस खोज के कार्य्य का भार ले लिया था। नेपल्स के एक अद्भुतालय (अजायबघर) में वहां के बहुत से दर्शनीय पदार्थों का संग्रह है।

नदियां—इटली में छोटी मोटी कई नदियां हैं। आल्प्स के दक्षिण भाग में पौ नदी बहुत बड़ी है। इटली के जिस भाग में पौ नदी बहती है वह बहुत उपजाऊ है। आल्प्स पर्वत के पास पौ नदी के जल से कई झीलें होगई हैं। जिनमें से तीन, लागोड़ी

गरडा, मागागांटी और कोमो, विख्यात हैं। पौ नदी के अतिरिक्त पश्चिम किनारे में टाइवर, परनो और बोलटरनो हैं।

खनिज पदार्थ—इटली में बहुत खानें नहीं हैं, जिससे खनिज पदार्थ भी विशेष नहीं होते हैं। खनिज पदार्थों में कोयला होता है, पर बहुत बढ़िया नहीं होता। कुछ स्थानों में लोहा भी होता है, पर सबसे अधिक खनिज पदार्थों में गंधक इतनी अधिकता से होता है कि जितनी आय समस्त खनिज पदार्थों से प्रति वर्ष होती है उसकी आधी केवल गन्धक मात्र से हो जाती है। सङ्गमरमर, सङ्गमूसा और एक प्रकार की चूने की सी मिट्टी, जो चिकनी होती है, उसके लिये भी इटली विख्यात है।

ऋतु—इटली की ऋतु इङ्गलेण्ड की अपेक्षा गर्म है। पर भारतवर्ष को देखते हुए ठण्डी है। उत्तर-इटली में सालभर में दो बार वर्षा होती है। दक्षिण इटली में सालभर में एक बार ठण्ड पड़ती है और फिर गर्मी होती है। वर्षा भी होती है। और कभी कभी १८ इञ्च से ६० इञ्च तक वर्षा हो जाती है।

खेतीबारी—अनाजों में गेहूं, ज्वार, चावल और बाजरा मुख्य हैं। चावल की खेती पौ नदी के मैदान में होती है। इस नदी में से जो नहर निकाली गई हैं, उन नहरों के जल से ही यह खेती सींची जाती है। शाक-पात में आलू, मटर प्रभृति बहुत होते हैं। अंगूर, नारङ्गी, अञ्जीर वगैरह भी इटली के विख्यात होते हैं। अगूरों की अधिक खेती होने के कारण शराब भी बहुत बनती है। और भी कई प्रकार के फल-फूल वहां होते हैं। भारतवर्ष की भांति वहां पर खेती का समस्त काम बैलों से ही लिया जाता है। अमेरिका में खेतों में जैसे घोड़े जोते जाते हैं, वैसा इटली में नहीं होता है। पशुओं में वहां पर अन्य

चौपायों के अतिरिक्त भेड़ें ज्यादा होती हैं। पहाड़ों में खेती का काम गौओं से भी लिया जाता है।

टापू—सिसीली, सारडेनिया तथा और भी कई छोटे छोटे टापू हैं।

मुख्य नगर—इटली की राजधानी टाइवर नदी पर रोम नगर है। रोम का प्राचीन इतिहास बड़ा मनोरञ्जक है। कहते हैं कि एक समय एल्बालोङ्गा (Albalonga) में एक अत्याचारी राजा राज्य करता था। उसने अपने बड़े भाई का राज्य छीन लिया था और अपने भाई के पुत्रों का वध कर डाला था। इतना ही करके वह शान्त नहीं हुआ, उसने अपने भाई की पुत्री के दो पुत्रों को नदी में फेंक दिया था। वे लड़के बहते बहते वहां तक बह गये, जहां वर्त्तमान नगर रोम बसा हुआ है। उन लड़कों की एक गड़रिये ने रक्षा की और बड़े होने पर उन्हें उनके नाना को सौंप दिया। इन लड़कों का नाम रोमल और रिमूस था। पहिले उन्होंने अपने नाना के भाई का वध किया, फिर पीछे टाइबर नदी पर दोनों भाइयों ने एक नगर बसाने की सोची, इस पर दोनों भाइयों में आपस में झगड़ा हो गया कि नगर किसका होगा। इस झगड़े में रिमूस मारा गया और रोमल ने अपने नाम पर रोम नगर बसाया, जो वर्त्तमान इटली की राजधानी है।

रोम नगर के अतिरिक्त, जिनोआ, फ्लारेन्स, वेनिस, नेपल्स, लोम्बार्डी, पेडमेण्ट, मिलन आदि कई नगर और प्रान्त हैं।

जन संख्या—३५०००००० है। इसका क्षेत्रफल ११००००

है । धन—५०००,००००००० पौण्ड है। इटली का सुवर्ण-भण्डार ५८८००००० है। वार्षिक औसत ९४३० पौण्ड का सुवर्ण निकलता है।

शिक्षा—भारतवर्ष से कहीं छोटी बस्ती होने पर भी भारतवर्ष के समान वहां पर शिक्षा का अभाव नहीं है। जिस अनिवार्य्य और मुफ़ शिक्षा का यहां प्रचार कराने के लिये स्वर्गीय महात्मा गोखले थक गये थे, वहां उसी मुफ़ और अनिवार्य्य शिक्षा का सरकार की ओर से प्रबन्ध है। वहां पर शिक्षा का कितना प्रचार है इसका पाठक केवल इतने से ही अनुमान कर लें कि वहां २१ विश्वविद्यालय स्थापित हैं। नेपल्स का विश्वविद्यालय बहुत बड़ा है। इसके अतिरिक्त खनिज, कृषि, व्यापार, शिल्पादि के अनेक विद्यालय हैं।

धर्म—इटालियन सरकार का धर्म रोमन केथोलिक है। परन्तु सरकार प्रजा के धर्म में हस्तक्षेप नहीं करती है। सभी धर्मावलम्बियों को धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। जब रोम साम्राज्य खूब चढ़ा-बढ़ा हुआ था, तब वहां ईसाई धर्म का प्रचार होने लगा था। परन्तु वहां के सर्वसाधारण लोग ईसाई मत के बड़े विपक्ष में थे। ईसाइयों को वहां अपने धर्मप्रचार में बड़ी दिक्कतों से सामना करना पड़ा था। यहां तक कि सन् ६५ में ईसाई धर्म के आचार्य सन्तपाल का सिर काट लिया गया था। परन्तु काल की क्रमोन्नति के साथ साथ, उसी रोम में पोप का राज्य हो गया था। उसी रोम में सन्तपाल के अनुयायी एक दिन समस्त यूरोप के स्वामी होगये थे। रोम के पोप के कारण इटली-निवासियों को किस तरह से मायाजाल में फँसना पड़ा था, उनकी कैसी दुर्गति हुई थी और फिर उनका किस

भांति पोप के जाल से छुटकारा हुआ था-यह सब वृत्तान्त पाठकों को समस्त पुस्तक पढ़ने पर विदित होगा।

सैन्य-बल

आजकल सभ्यता के समय में नार्मल एञ्जिल आदि भले ही शान्ति शान्ति के उपाय कह कर चिल्लाया करें, परन्तु प्रत्येक देश की रक्षा उसके सैनिक बल पर ही निर्भर है। इटली भी इस सिद्धान्त को माननेवाला है कि अपने बाहुबल पर भरोसा रखना चाहिये। लड़ाई के लिये इटली मे जो फौज है, वह तीन हिस्सों में बांटो जा सकती है। इसमें एक भाग, यानी सारी फौज का तिहाई भाग, पूरे तौर से शिक्षित रहता है। दूसरे भाग में रङ्गरूटी शिक्षा होती है और उसके बाद कभी कभी उसे अभ्यास करना पड़ता है। तीसरे भाग में अशिक्षित रिज़र्विस्ट होते हैं। नौकरी दो वर्ष तक सेना के साथ देनी पड़ती है। छः वर्ष तक कार्य से छुट्टी मिलती है और चार वर्ष तक चलती-फिरती फौज में सम्मिलित होना पड़ता है। दूसरे भाग के मनुष्य भी इतने ही समय तक कार्य्य करने के लिये बाध्य होते हैं। तीसरा भाग अशिक्षित होता है। गत कुछ वर्षों से चलती-फिरती सेना अधिक संख्या में शिक्षा प्राप्त करती है। इटली में बारह बड़े बड़े सैनिक दल हैं। प्रत्येक दल में दो पैदल पलटनें हैं। सब मिल कर इटली की फौजों में तीन सौ उन्नासी बटालियन पैदल पलटनें है। घुड़-सवार सेना में उन्तीस रिसाले हैं और छत्तीस मैदानी तोप-खाने हैं। इनमें एकसौ बानवे तोपे हैं। छत्तीस तोपखानों का एक पहाड़ी तोपखाना है। समुद्र तट के दश तोपखाने हैं और सार्डिनिया में भी एक ब्रिगेड है। दो किलों के तोपखाने हैं और

छः इञ्जिनियरों के। इटली के फौजी अफसर १६,००० सिपाही २,९०,०००, घोड़ा और खच्चर ६४,३०० कुल सैन्यबल १२,००,००० और अतिरिक्त सेना जो तैयार हो सकती है—१२००००० है।

युद्ध के समय इटली जितनी सेना तैयार कर सकता है, उसका मोटा हिसाब यह है :—

झण्डे के नीचे की फौजें	२५००००
छुट्टी पर गई हुई	४५००००
चलती-फिरती	३२००००
टेरिटोरियल	२२०००००
कुल संख्या	३२२००००

इनमें १०२०००० से कुछ कम अथवा अधिक सिपाही शिक्षित हैं।

समुद्री बल

ऊपर इटली की स्थलसेना के विषय में लिखा गया है। इटली में समुद्री बल के तीन जिले हैं। इटली के जहाजी बेड़े में भरती होने के लिये सिपाही मजबूर किये जाते हैं। समुद्र में आने जाने वाले बीस वर्ष की अवस्था वाले मनुष्यों को कम से कम अठारह महीने या इससे अधिक समय तक समुद्री सेना में काम करना पड़ता है। कभी कभी समुद्री सेना की सेवा की अवधि चार वर्ष तक हुआ करती है। लड़कों की समुद्री शिक्षा के लिये इटली में स्कूल भी खुले हुए हैं। सन् १९१४–१५ का सागर-बल-सम्बन्धी खर्च १५४६९५१३५) रु० मंजूर हुआ था। इस वर्ष के लिये ४००६३ अफसरों और जहाजी सिपाहियों की भी मंजूरी हुई थी। इनमें प्रायः तृतीयांश स्वेच्छासेवक हैं

और बाकी नौकरी करने के लिये बाध्य हैं। इटली की जलसेना में १ एडमिरल ७ वाइस एडमिरल, १५ रियर एडमिरल, ५६ कप्तान, ७५ कमाण्डर, ८५ लेफ्टिनेण्ट कमाण्डर, ४२० लेफ्टिनेण्ट और ३४० सब लेफ्टिनेण्ट हैं। सन् १९१४ की ३१वीं अक्टूबर को इटली के जहाजों की संख्या निम्नलिखित थीः—

जङ्गी जहाज	१५ (६ बन रहे थे)
सशस्त्र क्रूजर	१०
छोटे क्रूजर	१६ (२ बन रहे थे)
टारपीडो जहाज	३
टारपीडो जहाज नाशक	३३ (१३ बनते थे)
टारपीडो बोट	९४ (१ बनता था)
गोताखोर	२० (१० बनते थे)
अन्य जहाज	११

स्वीजिया, नेपल्स, वेनिस और टारण्टो में इटालियन सरकार के बन्दरगाह हैं। स्वीजिया के बन्दरों में बड़े से बड़े जङ्गी जहाज खड़े हो सकते हैं। वेनिस के दो बन्दरों में क्रूजर खड़े हो सकते हैं और जङ्गी जहाजों के लिये भी बन्दर बनाया जा रहा है। टारपीडो रखने तथा अन्यान्य समुद्र-युद्ध-सम्बन्धी सामान बनाने और रखने के लिये भी इटली में कितने ही स्थान हैं। इसके अतिरिक्त इटली में ४ एअरशिप (बड़े बड़े हवाई जहाज) और २०० छोटे उड़नेवाले (एराप्लेन) हैं। इटली की जन-संख्या देखते हुए कहना पड़ता है कि इटली की सामरिक शक्ति अच्छी है। यूरोप के महासमर से यह सब को अच्छी तरह से अनुभव हो गया है कि जिस देश के निवासियों को अस्त्र-शस्त्र रखने की रोक-टोक नहीं होती है, वे आत्मरक्षा करने में समर्थ होते हैं। यही कारण है कि इटली की इतनी

थोड़ी जन-संख्या होने पर भी वह बड़े बड़े राष्ट्रों से भिड़ने के लिये तैयार है। जब हम इस सम्बन्ध में इटली की अपने देश से तुलना करते हैं, तब हम को आन्तरिक खेद हुए बिना नहीं रहता है। यदि भारतवासियों को अस्त्र-शस्त्र रखने की स्वाधीनता होती, तो सरकार देखती कि कितने भारतवासी अङ्गरेजों का पक्ष लेकर जर्म्मनों से मैदान में भिड़ते। इसमें सन्देह नहीं कि फिर भी बहुत से भारतवासियों ने युद्धक्षेत्र में अपनी असीम वीरता का परिचय दिया है; परन्तु यहां सर्व-साधारण को अस्त्र-शस्त्र रखने की आज्ञा न होने तथा भारत-वासियों को स्वेच्छासेवक होने की आज्ञा न होने के कारण अनेक भारतवासियों के हृदय की उमङ्ग हृदय में ही रह गई है। क्याही अच्छा हो कि गवर्नमेण्ट भारतवासियों को अस्त्र-आईन से मुक्त करदे। यदि आज सर्वसाधारण भारतवासी अस्त्र-आईन से मुक्त होते और अस्त्र-शस्त्र-सञ्चालन की क्रिया से परि-चित होते तो सरकार से बिना किसी सङ्कोच के कह देते कि हमें अपनी रक्षा के लिये कुछ भी सेना की दरकार नहीं है। समस्त सेनाएं शत्रुओं के मुकाबले में भेज दो, हम अपनी रक्षा स्वयं कर लेंगे—पर हमारे ऐसे भाग्य कहां? अल्मोड़ादि पहाड़ी स्थानों में नित्य प्रति अनेक व्यक्ति जङ्गली जानवरों के शिकार होते रहते हैं, तब भी सरकार आत्मरक्षा के लिये, जङ्गली जानवरों से बचने के लिये, बिना लाइसेन्स के हथियार नहीं देती है। आजकल नित्य भयानक डाके पड़ते हैं; परन्तु उनके रोकने के लिये भी बिना लाइसेन्स के हथियार रखने की आज्ञा नहीं है। तब यहां के सर्वसाधारण को स्वेच्छासेवक आदि बनाना बहुत दूर की बात है।

तीसरा परिच्छेद

—○:०:○—

पूर्वदशा का दिग्दर्शन

"A thousand years' scarce serve to form a state,
An hour may lay it in the dust."—Byron.

संसार में ऐसी कोई जाति अथवा देश नहीं है, जिसको काल की कुटिल गति के सामने सिर न झुकाना पड़ा हो। यों तो समय समय पर सभी देशों का उत्थान और पतन होता ही रहता है, पर यूरोप के देश में काल की कुटिल गति के जितने थपेड़े इटली और ग्रीस* ने खाये हैं, कदाचित् उतने वहां किसी अन्य देश ने नहीं खाये हैं। एक समय था कि इटली और यूनान उन्नति की चोटी पर पहुँचे हुए थे। इनके बल, ऐश्वर्य्य और सामर्थ्य को देख कर अन्य देशों का कलेजा दहलता था। उस समय इटली और यूनान यूरोप के अन्य देशों के गुरु थे। अन्य देशों ने विज्ञान, गणित, काव्य, चित्रकारी, शिल्प, सङ्गीत आदि

---

*ग्रीस की दशा पर एक सहृदय कवि के निम्न वाक्य पढ़ने योग्य हैं :—

"Tis Greece ! but living Greece no more
so coldly sweet so deadly fair
we start for soul is wanting there."

किसी हिन्दी कवि ने उपर्युक्त पद्य का हिन्दी अनुवाद यह किया है :—

"ग्रीस है, पर ग्रीस यह, अब हाय ! प्राणविहीन है।
है मधुर अरु सुघर पर निश्चेष्ट है अरु क्षीण है।
सापेक्ष्य इसमें जीव है, पर जीवहीन मलीन है।

अनेक विद्याएं इटली और यूनान दोनों देशों से ही सीखी थीं। पर जिस चाण्डालिनी फूट ने सब से ऊँचा मस्तक रखनेवाले हिमालय की वृद्धा भारतमाता की अधोगति कर दी, उस फूट ने ही इटली और ग्रीस में परस्पर वैरभाव पैदा कर दिया। जिसका फल उक्त दोनों देशों को हाथों हाथ भुगतना पड़ा। जिसके कारण दोनों की स्वाधीनता लोप हो गई और बहुत दिनों तक पराधीनता की बेड़ी पहन गुलामी करते रहे। परन्तु कालचक्र के कारण पीछे स्वतन्त्रतादेवी दोनों देशों पर प्रसन्न हुई, दोनों देशों को स्वतन्त्रता प्राप्त होगई। यहां पर हमें ग्रीस के सम्बन्ध में विशेष बातों का उल्लेख न करके इटली के विषय में मुख्य बातें सुनानी हैं; क्योंकि जो इटली आज दिखलाई पड़ रहा है, वह आधी शताब्दी पूर्व ऐसा नहीं था।

प्रकृति का कुछ ऐसा नियम देखने में आता है कि सुख के पीछे दुःख और दुःख के पीछे सुख होता है। इटली के सम्बन्ध में प्रकृति का नियम विशेष रूप से देखने में आता है। इटली के भाग्य ने तीन बार बेढब पलटा खाया है। लोक में एक कहावत है कि स्त्रियों के चरित्र और पुरुषों के भाग्य की मनुष्यों को तो क्या देवताओं को भी खबर नहीं होती है। सच पूछिये तो पुरुषों की भाग्य की ही नहीं, देशों के भाग्य की भी किसी को खबर नहीं होती है। न मालूम कब किस देश का भाग्य पलट जाय। इटली का भाग्य तीन बार विशेष रूप से चमका था। यूरोप के सीजरों के समय में इटली अपने पूरे ओज पर था। फिर अपने धार्मिक पोपों के समय में भी इटली का यशसौरभ दूर दूर तक फैला हुआ था। उसके पीछे चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी में इटली के कई नगरों का, उनकी राज्य-व्यवस्था प्रजातन्त्र होने तथा व्यापार के कारण, दो चार सौ

वर्ष तक अच्छा महत्व रहा था। इन नगरों में जिनोआ, फ्लारेंस और बेनिस मुख्य थे। इटली के दक्षिण कोने पर आमल्फी (Amalphi) नाम का शहर है। वही सब से पहले प्रसिद्ध हुआ। वहां बड़े बड़े व्यापारी जहाज़ थे और वे माल लादने के लिये मिसर आदि देशों को जाया करते थे।

आमल्फी के अतिरिक्त दूसरा शहर पीसा था, इस नगर का भी व्यापार खूब चमका था। सन् १२०० ई० के लगभग जिनोआ और पीसा नगरों में व्यापार बढ़ने के कारण आमल्फी का गौरव घट गया था। पीसा का व्यापार भी, सन् १२८४ से सन् १४०६ तक जिनोआ और फ्लारेंस के व्यापार के कारण नष्ट हो गया था। १२५४ में फ्लारेंस शहर व्यापार में बहुत प्रसिद्ध होगया था। वहां के जुलाहे और सुनार बहुत ही प्रसिद्ध होगये थे। उस समय फ्लारेंस का इतना दबदबा था कि जब इङ्गलेण्ड के राजा तीसरे एडवर्ड ने फ्रांस से युद्ध छेड़ा था, उसके खर्च के लिये तीसरे एडवर्ड ने फ्लारेंस से कर्ज़ा लिया। फ्लारेंस में वार्डी नाम का एक व्यापारी था। उस अकेले व्यापारी से ही राजा एडवर्ड ने तीस लाख रुपये का कर्ज़ा लिया था। इसी तरह एक दूसरे व्यापारी से भी २० लाख रुपये लिये थे। वार्डी का ऋण राजा एडवर्ड ने नहीं चुकाया। इस लिये उसका दिवाला निकल गया। कहने का सारांश यह है कि उस समय फ्लारेंस नगर में रुपये-पैसे की कमी नहीं थी। वह नगर धनाढ्य था। व्यापार के साथ ही साथ फ्लारेंस में विद्या और कला की अच्छी उन्नति हुई। उन दिनों वहां पर बड़े बड़े नामवर कवि, ग्रन्थकार और मूर्त्तिकार थे। इसके बाद पीसा बन्दर फ्लारेंस के हाथ आया। इस लिये कुछ दिनों तक समुद्र का व्यापार भी फ्लारेंस के अधिकार में रहा।

फ्लारेंस की भांति वेनिस ने भी व्यापार में अत्यन्त उन्नति की थी; और यहां तक उन्नति की थी कि सात आठ सौ वर्ष तक वेनिस के समान धनवान् और शक्तिमान नगर यूरोप में दूसरा नहीं था। सन् ६९७ ई० में वेनिस में प्रजातन्त्र राज्य स्थापित हुआ था। राज्य चलानेवाली सभा का जो सभापति होता था उसे डोज (Doge) कहते थे। इन डोजों का महल, उनका दीवानखाना, न्यायालय, मीनार, रिआल्टो नामक लेनदेन का बाजार, पुतलियों के तथा मूर्त्तियों के और कांच की चीजों के कारखाने और प्रदर्शिनी इत्यादि वेनिस के दृश्य आज भी देखने योग्य हैं।

वेनिस की इतनी उन्नति का कारण उनका समुद्री व्यापार था। पन्द्रहवीं सदी के आरम्भ में वेनिस उन्नति के शिखर पर पहुँच गया था। उस समय वेनिस में कम से कम एक हजार साहूकार ऐसे थे, जिनकी वार्षिक आय बीस हजार रुपये से लेकर सवा लाख रुपये तक थी। यूरोप में होटलों की चाल पहले वेनिस में ही आरम्भ हुई थी। सब से पहला होटल वहां सन् १३१९ और १३२४ ई० में स्थापित हुआ था। जिनोआ नगर ने भी वेनिस के समान व्यापार में उन्नति की। परन्तु इन नगरों में आपस में युद्ध छिड़ गया, जिसके कारण दोनों का युद्ध में सत्यानाश हुआ। इटली के मिलन आदि नगरों की भी व्यापार में बड़ी उन्नति हुई थी, जिनका वर्णन स्थान के सङ्कोच के कारण यहां पर नहीं किया जाता है। केवल व्यापार-वाणिज्य में ही उस समय इटली नहीं बढ़ा हुआ था; प्रत्युत उस समय इटली में अनेक विद्वान्, चित्रकार और कवि भी उत्पन्न हुए थे। इटली के प्रसिद्ध कवि डान्टी का जन्म सन् १२६५ में फ्लारेन्स में हुआ था। अङ्गरेजी के प्रसिद्ध लेखक टामस

कारलाइल ने अपनी पुस्तक "वीर और वीरपूजा" में इस कवि के सम्बन्ध में लिखा है:—"रूस के पास चाहे जितने कज्जाक सवार हों, पर इटली डान्टी कवि के होने से विशेष भाग्यवान् है।" कारलाइल के उपर्युक्त वाक्य से अनुमान किया जासकता है कि डान्टी कैसा शक्तिशाली कवि था। सन् १४७४ में चील एङ्गलो बड़े अच्छे मूर्त्तिकार और चित्रकार का टसकनी में जन्म हुआ था। सन् १५६४ में प्रसिद्ध वैज्ञानिक गेलीओ का पीसा नगर में जन्म हुआ था। इस वैज्ञानिक विद्वान् ने ही यह पता लगाया था कि सूर्य नहीं घूमता, पृथ्वी घूमती है। ऐसे न मालूम कितने कवि, चित्रकार और लेखक हुए थे। कहने का सारांश यह है कि चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी के इटली ने अपनी विद्या, बुद्धि और बल से यूरोप के समस्त देशों पर सिक्का जमा लिया था। परन्तु यह सब होने पर भी इटली की उन्नति में फूट-रूपी दीमक लग गई थी, जिससे इटली की उन्नति में बाधा पहुँचने लगी। प्रत्यक्ष में तो इटली के विद्वान्, चित्रकार और कवि अपनी विद्या-बुद्धि और बल से यूरोप में बहुत कुछ प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके थे, तथापि भीतर ही भीतर फूटरूपी जो घुन लग रहा था, उससे उन्नति की बाढ़ रुक गई। जैसे मधुमेह से पीड़ित मनुष्य का शरीर भीतर ही भीतर खोखला और जर्जरित हो जाता है, वैसेही आपस की फूट और द्रोह से इटली जर्जरित हो रहा था। पहले राजनीति में रोमन सम्राट और धर्म में पोप सारे यूरोप के शासक समझे जाते थे। पर १४-१५ शताब्दी में इटली के नगरों में व्यापार, वाणिज्य को लेकर ही कलह नहीं हुई, किन्तु वहां आपस के झगड़े से राजव्यवस्था भी बिगड़ गई थी। उस समय रोम के पोप क्लीमेण्ट को अपने प्राणों का इतना भय हुआ कि वह वहां से फ्रांस को भग गया। उसको

अपने जीवन के अन्तिम दिवस फ्रांस में व्यतीत करने पड़े थे। यूरोप के अन्य भागों में पोप का प्रभाव कम हो जाने पर भी इटली में नहीं घटा। दूसरा पोप नियुक्त हुआ। परन्तु भीतर ही भीतर जो फूट फैल रही थी, उसका परिणाम यह हुआ कि इटली एक राष्ट्र न होकर कुछ हिस्सों में विभक्त होगया; और कई शताब्दियों तक पराधीनता की बेड़ी में जकड़ा रहा।

चौथा परिच्छेद

—ᴑ:०:ᴑ—

अज्ञानता का प्रचण्ड राज्य

"The blood of the martyars is the seed of the church."

—Lord Maculay.

उस समय इटली में ही नहीं, समस्त यूरोप में अज्ञानता का प्रचण्ड राज्य छा रहा था। वहां के सर्वसाधारण के विचार अत्यन्त सङ्कीर्ण थे। उस समय वहां इतना अन्धकार फैला हुआ था कि राजमहलों से झोपड़ियों तक जादू-टोने, भूत-प्रेत की चर्चा हुआ करती थी। वहां पर उन दिनों विज्ञान का विकास नहीं था। जादू-टोने के भय से जीते जी किसी की खाल उधड़वा लेना, नुचवा डालना, जला देना तो एक साधारण सी बात थी। इटली भी ऐसे मूढ़ विश्वासों से बच नहीं सका। एक तो जन-साधारण में स्वतः ही ऐसे विचार फैले हुए थे, दूसरे पोपों की प्रभुता कम नहीं थी। फिर भला इटली में अज्ञानता की मात्रा क्यों न बढ़ती ?

संसार का इतिहास साक्षी है कि कोई जाति, चाहे जितनी क्यों न गिर गई हो, किन्तु फिर भी उसमें समय समय पर ऐसे महात्मा निकल आते हैं जो अपने देशभाइयों को उनकी दुर्दशा समझाते रहते हैं। चाहे उनके कथन पर उनके देश-बन्धु ध्यान दें या न दें, यह जुदी बात है। इस प्राकृतिक नियम के अनुसार ही पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त में स्वाधीनता के उपासक "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" इस मन्त्र के जपने-

वाले, प्रातःस्मरणीय महात्मा सैवोनैरोला को व्यथित और कातर हृदय से अपने देशवासियों के प्रति यह भविष्यद्वाणी करनी पड़ी थी—"हे इटली! हे रोम! ईश्वर सङ्केत कर रहा है कि मैं, तुम्हें एक ऐसी जाति को सौंपनेवाला हूं, जो संसार में तुम्हारा नाम-निशान तक मिटा देंगे। राक्षस भूखे सिंह के समान चले आरहे हैं; और तुम्हारे आदमी मौत के शिकार इतने होंगे कि कब्र खोदनेवाले लड़के आवाज़ लगाते हुए सड़कों पर यही कहते फिरेंगे कि किसके यहां मुर्दा पड़ा हुआ है? समय ऐसा भयङ्कर आवेगा कि कोई अपने पिता की, कोई अपने बेटे की लोथ लेकर सड़कों पर निकलेगा! अरे रोम, मैं फिर भी कहता हूं-चेत! अरे वेनिस, अरे मिलन, अब चेत!"

परन्तु हाय! महात्मा सैवोनैरोला की दशा, अपने देशवासियों के प्रति इस चेतावनी से, होम करते हुए हाथ जलने के समान हुई। जिस इटली को महात्मा सेवोनैरोला के प्रति उपर्युक्त चेतावनी के लिये कृतज्ञ रहना चाहिये था, उस इटली ने उक्त महात्मा को नारकीय यन्त्रणाएं दीं—उपर्युक्त कथन पर जीते जी अग्नि में जलवा दिया। सैवोनैरोला पर जादू-टोने का कलङ्क लगाया गया। महापुरुषों के चरित्र में एक विशेषता होती है कि वे ऐसी विपत्ति आने पर अपने सिद्धान्त से विचलित नहीं होते हैं। वे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र के बतलाये हुए, आत्मा के असली तत्व को पहचानते हैं। * सैवोनैरोला पोप की यह

---

* भारतवर्ष में पूर्व समय में अपने धर्म और स्वाधीनता के लिये अनेक महापुरुषों ने अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया था। अपनी मान-मर्यादा के लिये यहां के पुरुषों ने ही नहीं, देवियों तक ने अपने प्यारे प्राणों

आज्ञा सुनकर विचलित नहीं हुआ। वह सहर्ष अग्नि में भस्म होकर इटली निवासियों के प्रति स्वाधीनता की, त्याग की ज्योति छोड़ गया। जन्मभूमि की दुर्दशा अपने भाइयों को समझानेवाले महात्मा सैवानैरोला को देशभक्ति का यह पारितोषिक मिला। प्रायः समस्त देशों में ऐसे सङ्कट के समय में देशभक्ति का ऐसा ही पारितोषिक मिला करता है। इस प्रकार के सङ्कट और यन्त्रणाओं से देश के कार्यों में चाहे प्रत्यक्ष जितनी हानि पहुँचती हो, परन्तु ऐसी घटनाओं से अप्रत्यक्ष रूप में देश के कार्यों में रुकावट नहीं आती है। बल्कि इस ढङ्ग की घटनाओं से सूखी हड्डियों में भी खून उबलने लग जाता है। तब ही तो लार्ड मेकाले का यह कथन ठीक प्रतीत होता है:—"The blood of the martyars is the seed of the church." अर्थात् जो लोग आत्मबलिदान करते हैं, उन्हीं का रक्त उपासनालयों की नींव डालनेवाला होता है। महात्मा सैवोनैरोला की आत्मबलि ने इटली में किञ्चित्मात्र स्वतन्त्रता

की आहुति दी थी। चित्तौड की पन्ना दासी ने सहर्ष अपने स्वामी-पुत्र की रक्षा के लिये अपने प्राणों से प्यारे पुत्र को कटवा दिया था। गुरु गोविन्द-सिंह के चारों पुत्र—राष्ट्रीय धर्म्म के निमित्त, बलिदान हुए थे। बालक हक़ीक़तराय ने खुशी खुशी से अपने धर्म्म के निमित्त, अपना मस्तक तलवार की भेंट कर दिया था, पर अपना धर्म्म परित्याग नहीं किया। गुरु-गोविन्दसिंह के उत्तराधिकारी बन्दा बहादुर ने सहर्ष अपने धर्म की रक्षा के लिये मृत्यु का आलिङ्गन किया था। चित्तौड़ के राणा रायमल्ल ने सत्य और धर्म के अनुरोध से अपने प्यारे पुत्र के वध करनेवाले को सोने के कड़े, और बदनोर जिला पारितोषिकस्वरूप भेंट किया था। भारतवर्ष के इतिहास में ऐसे अनेक दृष्टान्त मिलते हैं; पर शोक है, राष्ट्रीय दृष्टि से भारतवर्ष के इतिहास की आलोचना अभी तक किसी ने नहीं की है।

का भाव पैदा कर दिया था। परन्तु उस समय से एकोनविंशति शताब्दी तक इटली की भूमि युद्धस्थल बनी रही। इस बीच में इटली के भाग्य ने बड़े बड़े चक्कर खाये। बहुत से चढ़ाव-उतार देखे, परन्तु इटलीवालों में जातीयता का भाव कभी उत्पन्न नहीं हुआ। उस समय इटली की जो परिस्थिति थी, उस पर एक इतिहास-लेखक ने अत्यन्त करुण-भरे शब्दों में लिखा है:—*"रोमन साम्राज्य के पतन होने के समय से ऐसा कोई युग नहीं आया, जिसमें इटली को एक राष्ट्र कहा जाय। तब लकड़ियों के ढेर को भी जहाज कहा जायगा जब इटली को एक राष्ट्र कहा जा सकेगा।" एक और लेखक ने कहा था कि इटली केवल भौगोलिक परिभाषा को प्रकट करने के लिये ही है। इस भांति उस समय इटली को न केवल घृणा की दृष्टि से ही देखा जाता था, बल्कि "जिसकी लाठी, उसकी भैंस," इस कहावत के अनुसार, जिससे जो बनता था, वह वैसा ही उस पर अत्याचार करने में नहीं हिचकता था। उन दिनों इटली के निवासियों के जीवन का मूल्य कुत्ते-बिल्ली से विशेष नहीं समझा जाता था। उस समय उनकी दुर्दशा का अन्त न था।

---

*पिछली शताब्दी तक यूरोप में भूत-प्रेत जादू-टोने का विश्वास रहा था, जो अभी एकदम मिट नहीं गया है। जब कभी वहां कोई नवीन वैज्ञानिक आविष्कार करता था तब लोग उसे जादू-टोना करनेवाला समझ कर मार डालते थे। वैज्ञानिक, भौतिक आदि विषयों पर खोज करनेवालों को पादरी लोग शैतान का चेला बतलाते थे। पादरियों ने स्त्रियों को पापों का मूल ठहरा रखा था। अधिकांश स्त्रियां ही जादूगरीनियां समझ कर मारी जाती थीं। धीरे धीरे विद्या का प्रचार बढ़ने से वहां के लोगों में से यह विश्वास हट गया, परन्तु अभी तक जड़मूल से यह अन्धविश्वास और मूर्खता नष्ट नहीं हुई है।

पांचवां परिच्छेद

—○:०:○—

नेपोलियन की शरण

"रे रे चातक सावधानमनसा मित्र क्षणं श्रूयता-
मम्भोदा बहवो वसन्ति गगने सर्वेपि नैतादृशाः।
केचिद्वृष्टिभिरार्द्रयन्ति वसुधां गर्जन्ति केचिद् वृथा ॥
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः" ॥

—भर्तृहरि

इस निबन्ध के लिखने का उद्देश्य यूरोप अथवा इटली का शृङ्खलाबद्ध इतिहास लिखने का नहीं है। अतएव कालक्रम की घटनाओं को छोड़ कर यहां पर एतन्मात्र कहना है कि सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दियों का युग यूरोप के लिये विचित्र युग था। इस युग में यूरोप के बहुत से देशों के मनुष्यों ने मनुष्योचित अधिकारों के महत्व को पहचाना। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि इङ्गलेण्ड ने तेरहवीं शताब्दी से ही जातीयता के महत्व को पहचाना था। फ्रांस और स्पेन सोलहवीं शताब्दी तक अन्धकार में पड़े रहे थे। जर्मनी और इटली अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में ही चेते हैं। पर सच पूछिये तो पश्चिमी यूरोप के अभ्युदय का समय सत्रहवीं शताब्दी से है। चौदहवें लुई के समय में फ्रांस देश में जो राज्यक्रान्ति हुई थी, उसका प्रभाव यूरोप के समस्त देशों पर थोड़ा-बहुत पड़ा था। इस राज्यक्रान्ति से, यूरोप के अनेक देशों में सर्व-साधारण समझने लगे थे कि मनुष्य की हैसियत से मनुष्य के

क्या अधिकार हैं, और राष्ट्र की हैसियत से राष्ट्र के क्या अधिकार होते हैं। अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में यह विचार और भी परिपक्व होगये।

इस बीच में नेपोलियन साधारण सैनिक की हैसियत से बढ़ते बढ़ते, फ्रांस देश का सम्राट होगया। नेपोलियन बोनापार्ट के नाम से यूरोप के अन्य राष्ट्र ऐसे ही कांपते थे, जैसे भारतवर्ष में बच्चों को हौआ, लुलू कह कर डराया करते हैं। जिस समय अन्य यूरोपियन राष्ट्रों के, महावीर नेपोलियन के नाम पर, कलेजे दहल रहे थे उस समय इटली ने भी बांह गहे की लाज निबाहने के लिये नेपोलियन की शरण ली थी। सन् १७६७ में वेनिस राज्य ने नेपोलियन की वीरता पर मुग्ध होकर उसके हाथ में अपने को समर्पण कर दिया। पर न जाने नेपोलियन ने क्या समझ कर वेनिस आस्ट्रिया को दे दिया।

पहले सम्राट् नेपोलियन ने वेनिस की म्युनिस्पलटी को बड़े लम्बे लम्बे वचन दिये थे। उसने वेनिस म्युनिस्पलटी को विश्वास दिलाया था कि वह वेनिस की स्वतन्त्रता की रक्षा के निमित्त सब कुछ करेगा। उसने म्युनिस्पलटी को लिखा थाः—"सब दशाओं में मैं प्राणपण से यही प्रयत्न करूंगा कि तुम्हारी स्वतन्त्रता दृढ़ और स्थायी हो। मैं दुखी इटली को परदेशियों के हाथ से मुक्ति और स्वतन्त्रता का आसन प्राप्त करते हुए देखना चाहता हूं"। इस तरह की घोषणा करने पर भी नेपोलियन ने अपनी सामर्थ्य के अनुसार इटली को स्वतन्त्र बनाने का उद्योग नहीं किया। यद्यपि इसके पीछे नेपोलियन ने बहुत सा भाग जीत लिया, अपने प्रतिनिधि भी रखे, पर लोग सन्तुष्ट नहीं हुए।

नेपोलियन के हाथ में आत्मसमर्पण करके वेनिसवालों की आंखें खुलीं, और उनको अनुभव हुआ कि जो देश अपने पैरों के बल खड़ा नहीं हो सकता है, जिस देश को अपने बाहु-बल पर विश्वास नहीं है, वह देश कदापि नहीं उठ सकता है। संसार में आत्मविश्वास सब विश्वासों से ऊपर है। आत्मविश्वास से बढ़कर संसार में और कोई शक्ति नहीं है।

नेपोलियन के हाथ में इटली के कुछ भागों की बागडोर पहुँचने पर इटली का भला हुआ या बुरा, इस विषय में अनेक इतिहासलेखकों का मतभेद है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इटली की आनेवाली सन्तान के हृदय में यह भाव उत्पन्न हो गया था कि भाग्य का निश्चय भगवान् के हाथ में है और भगवान् भी उसी की सुनते हैं, जो अपने निश्चय पर दृढ़ होता है।

छठा परिच्छेद

आत्मत्याग के ज्वलन्त उदाहरण

"दुरबल को न सताइये, जाकी मोटी हाय,
मुई खाल की स्वांस सों, सार भसम होजाय।" कबीर

"न तड़फने की इजाज़त है न फर्याद की है,
घुटकर मर जाऊं मर्ज़ी मेरे सैयाद की है।"

सन् १८१५ का वर्ष फ्रांस के इतिहास में ही नहीं, बल्कि समस्त यूरोप भर के इतिहास में चिरस्मरणीय है। संसार-चक्र का पहिया उलट-पुलट करता ही रहता है और कौन ऐसी शक्ति है जो इस चक्र से बची हो? अखण्डनीय शक्ति का घमण्ड रखनेवाले भी संसार-चक्र से अपनी रक्षा करने में समर्थ नहीं हुए हैं। इस प्राकृतिक नियमानुसार ही यूरोप की ज़बरदस्त शक्तियों को चकनाचूर करनेवाला नेपोलियन भी संसारचक्र के नीचे दब गया। वाटरलू के युद्ध में नेपोलियन से विजयलक्ष्मी रूठ गई। एक दिन जिस नेपोलियन का प्रताप मध्याह्न के सूर्य्य के समान यूरोप में देदीप्यमान हो रहा था, वाटरलू का युद्ध उस वीर-शिरोमणि नेपोलियन को राहु और केतु के ग्रहण के समान ग्रसित करनेवाला हुआ। जिस भांति पूर्ण चन्द्र की सुन्दर, सुहावनी कौमुदी ग्रहण के कारण छिन्न-भिन्न हो जाती है वैसे ही बेचारे नेपोलियन का वैभव वाटरलू के संग्राम के पीछे क्षीण होगया। वाटरलू के युद्ध के पीछे, अपने विश्वासघाती मित्र मुरा के षड्यन्त्र में फँसकर, बेचारे नरकेशरी

नेपोलियन को सेण्टहेलना में जीवन के अन्तिम दिवस व्यतीत करने पड़े।

जैसे शिकारी की प्रसन्नता का ठिकाना, सिंह को अपने जाल में फँसाकर, नहीं रहता है, वैसे ही नेपोलियन का पतन देखकर यूरोप के अन्य राष्ट्रों की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। सन् १८१५ में नेपोलियन के पतन के पीछे वेनिस की कांग्रेस में यूरोप के सब झगड़े तय किये गये और भिन्न राज्यों में परस्पर बहुत से निश्चय हुए और पृथ्वी का बटवारा हुआ। इटली स्वाधीनता का उपभोग उस समय भी न कर सका। इटली में उस समय दस राज्य स्थापित हुए, परन्तु एक सारडिनिया के राजा को छोड़ कर, बाकी के सब राज्य आस्ट्रिया के हाथ की कठपुतली बने हुए थे। सभी आस्ट्रिया के इशारे पर नाचते थे। आस्ट्रिया की तूती एक ओर वेनिस से लेकर दूसरी ओर नेपल्स तक बजती थी। आस्ट्रिया के राजकुमार कई राज्यों में राज कर रहे थे। सन् १८१५ में इटली की बड़ी शोचनीय दशा होरही थी। सन् १८१५ में उसके एक देशभक्त और सहृदय कवि ने कहा था:—

"इटली मुर्दे की लोथ के समान हो जायगी।" सन् १८१५ से १८४८ तक इटली के इतिहास के पृष्ठ दुःख, अन्याय और अत्याचारों के विवरणों से रँगे हुए हैं। उस समय उसके निवासियों पर जो अन्याचार किये गये थे उनकी कुछ सीमा नहीं है। तनिक मुँह खोलने पर लोगों को जेल में ठूंस देना कोई बड़ी बात नहीं थी। चारों ओर अराजकता का राज्य छाया हुआ था। उस समय वहां के निवासियों का शिकार हिंसक जीव जन्तुओं के समान किया जा रहा था। आस्ट्रिया के

अधिकारीवर्ग यही चाहते थे कि स्वतन्त्रता के भाव सर्व-साधारण में फैलने न पावें।

देवर्षि नारद ने धर्मराज युधिष्ठिर से राजकीय विषयों पर अनेक प्रश्न और उपदेश करते हुए पूछा था–"राजन्! आप किसी दुर्बल को तो नहीं सताते हैं? सुनने और देखने में यह प्रश्न साधारण सा है, पर इसमें गूढ़ तत्व भरा हुआ है। क्योंकि दुर्बल पर अत्याचार करना ही उसको सबल बनाना है। जब किसी निर्बल व्यक्ति या राष्ट्र पर बहुत अत्याचार किया जाता है तब वह अपने प्राणों का मोह परित्याग करके अत्याचारियों का सामना करने को तैयार हो जाता है। यही दशा उस समय इटली की हुई। निरन्तर अत्याचारों ने इटली निवासियों की आंखें खोल दीं। सब से पहले सन् १८२१ में देशभक्त कानफैलोनीटी ने ही मिलन नगर में एक खुली सभा स्थापित की। इस सभा में भर्ती होते समय बड़ी कठोर प्रतिज्ञा करनी पड़ती थी। जो मनुष्य इस सभा में भरती होता था, उसको यह शपथ ग्रहण करनी पड़ती थीः—"मैं ईश्वर और अपनी मर्यादा की शपथ खाता हूं कि मैं पूरी शक्ति से और अपने प्राणों की बाजी लगा कर भी इटली को विदेशियों के शासन के पञ्जे से छुड़ाने की चेष्टा करूंगा"। इस ढङ्ग की सभा स्थापित करने के कारण बेचारे कानफैलोनीटी को जन्मभर के लिये कारागार का दण्ड मिला। बहुत से पराधीन देशों में सच्ची देशभक्ति राजद्रोह का अङ्ग समझी जाती है। देशभक्ति कठिन कसौटी पर कसी जाती है। चाहे जिस पराधीन देश के इतिहास को उठा लीजियेगा, उसमें देशभक्ति की कठिन परीक्षा के ज्वलन्त दृष्टान्त मिलेंगे। इटली में भी उस कठिन समय में अनेक देशभक्तों को देशभक्ति की परीक्षा में कठोर यन्त्रणाएं सहन करनी पड़ीं।

आस्ट्रिया के सम्राट् ने न जाने कितने देशभक्तों—सिलवियो पेलिको पोट्रो, मारेनसीली आरेनसीली आदि—के प्राण केवल देशभक्ति के अपराध में लिये थे।

उन दिनों इटली के शुभचिन्तकों ने कुछ और उपाय चलता न देखकर अपना खून बहाकर अज्ञानता की, पराधीनता की, अन्याय की दीवालें कमजोर करनी आरम्भ कर दी थीं। ऊपर इटली के जिन व्यक्तियों के मारे जाने का वर्णन किया गया है, उनमें से अधिकांश "कारबोनेरी" नामक सभा के मेम्बर थे। बहुत दिन हुए जब इटली में यह सभा (कारबोनेरी) स्थापित हो चुकी थी। इस सभा का उद्देश्य समय समय पर राज्य के विरुद्ध बलवा करा देना था। ❋"कारबोनेरी" के प्रभाव से पोप के राज्य में कुछ बलवा हो चुका था। तीसरी फरवरी सन् १८३१ को मैनोटी के घर में कुछ षड्यन्त्रकारी गिरफ़्तार हुए थे। पोप गरगरी सोलहवें के निर्वाचन के दो दिन पीछे ही बोलगना में विद्रोह हुआ था। बेचारा मैनोटी बड़ी दुर्दशा से मारा गया। मैनोटी ने जो पत्र मृत्युसमय अपनी स्त्री को लिखा था, उससे मैनोटी के देशप्रेम का पूरा पूरा पता लगता है। उस पत्र से ज्ञात होता है कि मैनोटी अपने व्रतपालन में अचल था और देशभक्ति की परीक्षा में वह अटल पर्वत के समान दृढ़ था। साथ ही उसकी इच्छा थी कि देशभक्ति

❋ एक इतिहासलेखक इस सभा के सम्बन्ध में लिखता है—The practical aims of the Carbonari may be summed up in two words freedom aud independence.

इसका अर्थ यह है कि कारबोनेरी सभा का व्यावहारिक उद्देश्य दो शब्दों में विभक्त किया जा सकता है,—स्वतन्त्रता और स्वाधीनता।

सदैव उसके वंश में निवास करती रहे। उसने अपनी स्त्री को बड़े ही मर्मभेदी शब्दों में लिखा थाः—

"जब मेरे बच्चे बड़े हों, तब उनको समझा देना कि मुझे अपने देश से कैसा प्रेम था?" उस समय इटली के अनेक व्यक्तियों के हृदय में अपने देश की दुर्दशा देखकर इस भांति ज्वाला उठ रही थी कि वे देश की शोचनीय स्थिति को विचार करके मृत्यु के सामने सहर्ष अपने सिर को नवा देते थे।

सातवां परिच्छेद

——:०:——

मेज़िनी और चार्ल्स एलबर्ट

"पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्द्धनम्।
उपदेशो हि मूर्खाणाम् प्रकोपाय न शान्तये॥"

जिस वर्ष ऊपरवाली घटना हुई थी, उसी वर्ष अर्थात् सन् १८३१ में चार्ल्स फिलोक्स के सारडियन सिंहासन पर उसका चचेरा भाई चार्ल्स एलबर्ट उत्तराधिकारी हुआ। *मेजिनो उस समय मार्सेल्स में था। उसने चार्ल्स एलबर्ट को

---

* मेज़िनी, एक डाक्टर का पुत्र था। सन् १८०५ की २२वीं जून को जेनोआ के एक गांव में इसका जन्म हुआ था। इसकी माता अत्यन्त बुद्धिमती और सुशीला थी। मेज़िनी बाल्यावस्था से ही अपनी जन्मभूमि की दुर्दशा देखकर इतना दुःखित हुआ कि वह सदैव काला कपड़ा पहने रहता था। तेरह वर्ष की अवस्था में ही इसके लेख बड़े प्रभावोत्पादक होते थे। वकालत पास करने पर भी, माता पिता के अनुरोध से उसने वकालत नहीं की। जिस 'कारबोनेरी" सभा का वृत्तान्त ऊपर लिखा गया था, यद्यपि वह इस सभा से सन्तुष्ट न था, तथापि इसके समान और कोई सभा न होने पर उसको इसीमें रहना पड़ा। सन् १८३० में इटली की पुलिस ने उसको पकड़ा। जब उसके पिता ने उसके पकड़े जाने का कारण पूछा, तो गवर्नमेंट ने उसे यह उत्तर दिया :—"The Government were not found of youngmen of talent, the subject of whose musings were unknown to them." अर्थात् गवर्नमेंट ऐसे बुद्धिमान् युवकों को पसन्द नहीं करती है जिनके विचार उससे गुप्त रहें।"

एक पत्र लिखा, जिसका आशय यह था:-"थोड़ीसी सुविधा हो जाने से ही मनुष्य सन्तुष्ट नहीं होंगे। वे मनुष्योचित उन अधिकारों को प्राप्त करना चाहते हैं, जो युगों से उनसे छीन लिये गये हैं। वे नियम (कानून), स्वतन्त्रता, निर्भीकता और एकता चाहते हैं। उन्होंने स्वतन्त्र आदमियों को अपने देश में देखा है, जो इसे मुर्दों की भूमि कहते हैं। उन्होंने गुलामी के प्याले की याद सोख डाली है; और अब इसको दुबारा न भरने की शपथ खा चुके हैं। बादशाह को पेडमान्ट का ही नहीं, बल्कि इटली का विचार रखना चाहिये। समस्त इटली केवल एक शब्द की बाट देख रहा है। उसको बनाइयेगा, उसे जातियों में सर्वोपरि करने का प्रयत्न कीजियेगा, अपनी ध्वजा पर कृपया लिखियेगाः—"एकता, स्वतन्त्रता और निर्भीकता"। स्वतन्त्रता के विचारों की घोषणा कीजियेगा। सर्वसाधारण के अधिकारों के लिये अपने को रक्षक और इटली का उद्धारक बनाइयेगा। जङ्गलियों के पञ्जे से उसे छुड़ाइयेगा। भविष्य-निर्माण कीजिये, अपने समय से नया युग प्रारम्भ कीजियेगा। उस मार्ग को ढूंढ़ि-

---

वह छः महीने बन्दीगृह में रहा। उसे बन्दीगृह में ही "यङ्ग इटली" अर्थात् "युवा इटली" नामक सभा बनाने की सूझी। इस सभा के बल से मेज़िनी ने बडी खलवल मचा दी थी। छः महीने पीछे मेज़िनी को जेल से छुटकारा मिला; परन्तु फिर उसे देशनिकाला होगया। इस लिये चार्ल्स एलबर्ट के राजसिंहासन ग्रहण करनेपर वह मार्सेल्स में था। मेज़िनी ने देश-सेवा करने में बड़े कष्ट सहन किये थे। यह महाराणा प्रतापसिंह की भांति अन्तकाल तक अपनी जन्मभूमि का ही स्मरण करता रहता था। जब सन् १८७२ में मेज़िनी का देहान्त हुआ था तब उसकी रथी के साथ अस्सी हजार आदमी थे। मेज़िनी के जीवन का विशेष वृत्तान्त इस लेखक की लिखी हुई दूसरी पुस्तक "वर्त्तमान इटली के निर्माता" में लिखा गया है।

येंगा जो जाति के अनुकूल हो। बिना किसी परिवर्त्तन के उसका समर्थन कीजियेगा। दृढ़ रहिये और समय की बाट देखियेगा कि विजय आपके ही हस्तगत होगी। महाराज! इन शर्तों पर हम अपना जीवन आपको समर्पण करते हैं। हम आपकी विजय-पताका इटली के छोटे छोटे राज्यों में ले जायँगे। हम अपने भाइयों को वह लाभ दर्शा देंगे जो एकता से प्राप्त होते हैं। हम अपने राष्ट्रीय भाव और देशभक्ति के अनुराग की वृद्धि करेंगे। हम वह उपदेश करेंगे, जिससे सेनाएं बनेंगी ....हमें एकत्रित कीजिये—महाराज! हम अवश्य विजय करेंगे।"

पर अफसोस! मेज़िनी की यह करुणामयी प्रार्थना बादशाह के बहरे कानों पर पड़ी। ठीक वही बात हुई कि दूध पिलाने से सांप का क्रोध शान्त नहीं होता है, बल्कि बढ़ता है। उचित तो यह था कि बादशाह मेज़िनी की इस बहुमूल्य सम्मति से लाभ उठाता और मेज़िनी का कृतज्ञ रहता, परन्तु नहीं, उसने आज्ञा दी कि यदि मेज़िनी सीमा पार करके इटली में घुसने की चेष्टा करेगा तो तत्काल गिरफ़्तार कर लिया जायगा। यद्यपि मेज़िनी की उपर्युक्त प्रार्थना बादशाह ने नहीं सुनी, तथापि सर्वसाधारण ने मेज़िनी की प्रार्थना का हृदय से अनुमोदन किया।

आठवां परिच्छेद

—○:०:○—

युवा इटली की स्थापना

"Not by material, but by moral force, are men and their actions governed." —Carlyle.

अमानुषिक बल से, पाशविक अत्याचारो से, कभी किसी ने सर्वसाधारण के हृदय पर अधिकार प्राप्त नही किया है। जनता के हृदय पर शासन करने के लिये आत्मिक बल, प्रेम और उदारता की आवश्यकता हुआ करती है। बादशाह की धमकी से सर्वसाधारण के हृदय से मेज़िनी का आदर कम नहीं हुआ। मेज़िनी ने उस समय युवा इटली (यङ्ग इटली) नामक सभा स्थापित की थी। उसमें लोग सहर्ष शामिल होने लगे। मेज़िनी ने सवोना जेल में रहते समय ही इस सभा के स्थापन करने का विचार किया था। क्योंकि प्रथम तो वह "कारबोनेरी" सभा के कार्यक्रम से सहमत न था, वह "कारबोनेरी" सभा के उद्देश्य और कार्य करने के ढङ्ग को पसन्द नहीं करता था। "कारबोनेरी सभा" उस समय इटली के शासन को उलट-पुलट करना तो चाहती थी; परन्तु भविष्य के लिये उक्त सभा की रचनात्मक नीति न थी। दूसरे मेज़िनी यह भी समझता था कि प्रत्येक देश की स्थिति नवयुवाओं के हाथ में है, जिस देश के नवयुवक कर्त्तव्यपरायण नहीं होते हैं, उस देश का भविष्य अन्धकारमय होता है। मेज़िनी ही क्यों, समस्त यूरोप भर में नवयुवाओं के हृदय में अपने देश के प्रति प्रीति उत्पन्न

करने के भाव फैल रहे थे। फ्रांस और जर्मनी में "युवा (यङ्ग) फ्रांस" और "युवा (यङ्ग) जर्मनी" सभाएं स्थापित हो चुकीं थीं। मेज़िनी ने भी उसी भांति "युवा इटली" स्थापित की। इस सभा के सभासद होते समय देशसेवा करने के लिये बड़ी कठोर प्रतिज्ञाएं करनी पड़ती थीं। इस सभा के अनेक उद्देश्यों में से दो उद्देश्य यह भी थे—जो मनुष्य इसके सभासद हों, उन्हें यह विचार लेना भी ज़रूरी है कि उनको देश के स्वतन्त्र होने तथा सारे देश में एक प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करने में अनेक प्रकार की यन्त्रणाएं भोगनी पड़ेंगी। इस सभा का एक उद्देश्य यह भी होगा कि इसके सभासद इटली के सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार करें, जिससे वहां के लोगों के हृदय से अज्ञानान्धकार दूर हो; और वे स्वाधीनता प्राप्त करने मे प्रयत्न करें तथा स्वावलम्बन सीखें, किसी सभा अथवा जाति के भरोसे न रहें।

मेज़िनी ने केवल "तरुण इटली" नाम की सभा ही स्थापित करके अपने कर्त्तव्य की समाप्ति नहीं समझी; किन्तु उसने उस सभा से "यङ्ग इटली" नाम का एक पत्र भी प्रकशित करना आरम्भ कर दिया।

इस पत्र के द्वारा वह अपने धार्मिक और राजनैतिक विचारों का प्रचार करता रहा। "यङ्ग इटली" नामक पत्र की बहुत सी प्रतियां इटली में भेजी जाती थीं। वहां लोग इस पत्र को बड़े चाव से पढ़ते थे। इस पत्र के द्वारा मेज़िनी की शिक्षाओं का यह प्रभाव हुआ कि अनेक युवा इस सभा में शामिल होने लगे। ये ही लोग गुप्त भाव से "यङ्ग इटली" पत्र का अपने देश में प्रचार करने लगे। मेज़िनी ने अपने अनुयायियों

को बार बार यही उपदेश दिया:—"केवल इटली के नाम से उठो, किसी दूसरे के नाम से मत उठो।"

यङ्ग इटली के स्थापन करने से मेज़िनी को कैसी सफलता प्राप्त हुई थी, इस विषय में उसने स्वयं जो कुछ लिखा है उसका भावार्थ यह है—"सिद्धान्तों की सच्चाई के कारण थोड़े ही समय में इटलीनिवासियों मे से थोड़े से नवयुवक निकले, जो निस्सहाय और अपरिचित थे। उन्होंने एक ऐसे ऐसोसियेशन को स्थापित किया, जो सात गवर्नमेन्टों को डराने के लिये काफ़ी और ज़बरदस्त था। मेरे विचार में इसका यही प्रत्यक्ष प्रमाण है कि उन्होंने जो झण्डा उठाया था वह झण्डा सच्चाई का था।" इस सभा के कारण मेज़िनी और उसके साथियों को किन किन कठिनाइयों से सामना करना पड़ा, इस विषय में मेज़िनी ने स्वयं लिखा है:—"मैंने यह दो वर्ष बड़े कष्ट, परन्तु देशप्रेम में, व्यतीत किये। चारों ओर से शत्रुओं ने हम लोगों को घेर रखा था और सदा हम अपनी प्राणरक्षा के लिये चिन्तित रहते थे। कभी कभी अपनी ही मित्रमण्डली में किसी किसी पर सन्देह करने लग जाते थे। परन्तु जो लोग किसी भय, विरोध और बाधा की चिन्ता न करके अपने देश के काम में जुटे रहे, उन्होंने देश में यह महान् आदर्श उपस्थित कर दिया कि हम लोग जो काम करते हैं उससे अपना कोई सरोकार नहीं है। अपनी हानि-लाभ के लिये नहीं करते हैं। अपने देश और समाज के कारण दुःख को दुःख नहीं समझते, समस्त सुख-चैन अपनी जाति को पहले ही समर्पण कर चुके हैं।"

वास्तव में मेज़िनी को अपने उद्देश्य की पूर्ति में कितनी ही बार असफलता प्राप्त हुई। जिन दिनों "यङ्ग इटली" की धूम

मच रही थी, इटली के कई स्थानों में राजद्रोह होगया। रोम-वाले पोप के अत्याचार से तो पहले ही से दुःखित थे। "गङ्गा आने वाली ओर भागीरथ के सिर पड़ा" इस कहावत के अनुसार उन्होंने राज्यक्रान्ति कर दी। मुद्दत से परतन्त्रता की बेड़ी में जकड़े हुए, इटली के मुर्दा निवासियों के दिलों में स्वतन्त्रता की इतनी प्रबल लालसा होगयी थी कि अनुमानतः २५ लाख मनुष्यों ने पोप तथा आस्ट्रिया के अनुचित शासन से अपने आपको स्वतन्त्र कर लिया। परन्तु उस समय इटली के भाग्य में स्वतन्त्रता बदी नहीं थी; क्योंकि इस राष्ट्रीय यज्ञ को उन्होंने प्रान्तिक बना डाला। इसका परिणाम यह हुआ कि छोटे छोटे राज्य आस्ट्रिया के सामने ठहर न सके और इस जातीय कार्य में बाधा पहुँची। परन्तु मेजि़नी और उसके साथी इससे निराश न हुए, उन्होंने अपना उद्योग निरन्तर प्रचलित रखा।

सन् १८३२ के अगस्त में मेजि़नी को फ्रांस से देशनिकाला हुआ। एक वर्ष या उससे कुछ अधिक दिन तक मेजि़नी के पीछे पुलिस फिरती रही, पर वह पुलिस को छकाता ही रहा, उसके हाथ न आया। सन् १८३३ में वह वहां से स्वीटज़रलेण्ड को चला गया। वहां उसने "यङ्ग यूरोप" नाम की एक सभा और स्थापित की जिसमें समस्त यूरोप के कैदी तथा देश से निकाले हुए लोग शामिल थे। परन्तु मेजि़नी के भाग्य ने उसे स्वीटज़रलेण्ड में भी नहीं टिकने दिया। स्वीटज़रलेण्ड की सरकार भी मेजि़नी को अपने यहां टिकने को तैयार नहीं हुई। अन्त में लाचार होकर मेजि़नी को स्वीटज़रलेण्ड छोड़ना पड़ा और अन्त में इङ्गलेण्ड में जाकर शरण ली।

नवां परिच्छेद

देशभक्ति की कठोर परीक्षा

"आपद्गतः किल महाशय चक्रवर्त्ती
विस्तारयत्यकृतपूर्वमुदारभावम् ।
कालागुरुर्दहन मध्यगतः समन्ता—
ल्लोकोत्तरं परिमलं प्रकटीकरोति ॥"

(भामिनीविलास)

धीरज धर्म मित्र अरु नारी, आपतकाल परखिये चारी ।

(गो० तुलसीदास)

सृष्टि का यह कुछ नियम है कि जो लोग धर्मात्मा तथा देश-भक्त होते हैं, उनकी परमात्मा की ओर से कठिन परीक्षा होती है। जिसने बालपन में सहनशीलता और धैर्य्य का अभ्यास कर लिया है, वही इस कठोर परीक्षा में उत्तीर्ण होता है। कौन नहीं जानता कि पाण्डवों को अपना राजपाट छोड़ने के पश्चात् बन में कैसे कैसे क्लेश भोगने पड़े थे। भिखारी तक का भेष धारण करना पड़ा था और विराट राजा की दासता तक ग्रहण करनी पड़ी थी। खैर, पाण्डवों की बात जाने दीजिये। इधर पिछली शताब्दियों के चाहे जिस महापुरुष के चरित्र को देख लीजिये, तो पता लगेगा कि उनको अपने देश और धर्म की रक्षा करने में कैसी कैसी कठोर यन्त्रणायें सहन करनी पड़ी हैं। केवल भारतवर्ष के महापुरुषों को ही नहीं, संसार के चाहे जिस देश के, चाहे जिस इतिहास को उठाकर देख लीजियेगा, इस

कथन की सच्चाई के प्रमाण मिलेंगे। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि उसी व्यक्ति को अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त होती है, जो मार्ग में रुकावटें आती हों उनसे न उकताकर अपने उद्देश्य की पूर्त्ति की निरन्तर चेष्टा करता रहे। मेज़िनी को भी अपने जीवन में बड़ी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इङ्गलेण्ड में पहुँचकर भी मेज़िनी की आत्मा को शान्ति नहीं मिली। वहां उसका जीवन बड़ा ही अन्धकारमय रहा। उसको रुपये-पैसे की बड़ी तङ्गी भुगतनी पड़ी। जिस समय मेज़िनी इङ्गलेण्ड पहुँचा, उसके साथ, उसके तीन मित्र और थे, उनको भी देशनिकाले की आज्ञा मिली थी। मेज़िनी अपने इन तीनों मित्रों से अत्यन्त प्रेम रखता था। मेज़िनी हृदय का सच्चा था। वह अपने इन मित्रों को बड़ा विश्वासपात्र समझता था। मेज़िनी का अपने इन मित्रों के प्रति कैसा व्यवहार था, इसके विचारने से ही मेज़िनी के चरित्र की महत्ता प्रकट होती है। जिस समय वह रुपये-पैसे से बड़ा तङ्ग था, उसको कहीं भोजन का भी ठिकाना न था, उस समय उसकी माता अपने पति से छिपाकर उसको कुछ खर्च भेज देती थी। मेज़िनी थोड़े से धन की प्राप्ति में आप संयम से रहकर अपने मित्रों की भी सहायता करता था। परन्तु उसके तीनों मित्र उससे सदैव अप्रसन्न रहते थे। प्रायः दुनियां में यह देखने में आता है कि सीधे, सच्चे और ईमानदार व्यक्ति से स्वार्थी लोग कुछ न कुछ लाभ उठाया ही करते हैं। भला तब मेज़िनी के तीनों मित्र क्यों चूकने लगे? वे भी मेज़िनी के निष्कपट व्यवहार से लाभ उठाने लगे। मेज़िनी इतना उदार था कि वह कोई तनिकसी वस्तु होती तो भी उसके चार भाग कर डालता था। * उसकी माता जिनोआ से

* मेज़िनी के पिता ने मेज़िनी को आर्थिक सहायता देनी केवल इस

उसके लिये वस्त्र भेजा करती थी; पर जब उसे पता लगा कि उसका पुत्र अपने तीन मित्रों को बिना दिये नहीं लेता है, तब वह चार भेजने लगी। पर तिस पर भी उसके वे तीनों मित्र सन्तुष्ट न हुए। इङ्गलेण्ड में सन् १८३७ से सन् १८३८ के जून तक मैज़िनी की जो दशा रही थी, उस दशा का उसने एक स्थान पर बड़े हृदयविदारक शब्दों में वर्णन किया है। एक दिन मेज़िनी को एक पुराना जूता और एक कोट तक गिरवी रखने की नौबत आगई थी। किन्तु ऐसे ऐसे सङ्कट उपस्थित होने पर भी मेज़िनी अपने धैर्य्य से च्युत नहीं हुआ। मेज़िनी ने अपनी इस दशा का उल्लेख करते हुए उन धनवान् पुरुषों को बड़ी फटकार बतलायी है जो अपने बच्चों को सुख और ऐश्वर्य का अभ्यस्त और कीड़ा बना देते हैं। इस स्थल पर मेज़िनी ने अपनी माता की बड़ी प्रशंसा की है और लिखा है:—"उसने ही मुझे बाल्यावस्था में सहनशीलता और धैर्य्य की शिक्षा दी थी, जिससे मैं बड़े बड़े सङ्कटों में धैर्य्य से विचलित नहीं हुआ।"

ऐसे ऐसे सङ्कट आजाने पर भी इङ्गलेण्ड में मेज़िनी चुप नहीं रहा। वह अपने देश निकाले हुए भाइयों की सहायतार्थ अङ्गरेजी अखबारों में लेख लिखा करता था। लेखों में वह कुछ न कुछ अपने देश का वर्णन करता ही था। धीरे धीरे मेज़िनी

कारण से बंद कर दी थी कि मेज़िनी तङ्ग आकर राजनीतिक आन्दोलन परित्याग कर देगा। परन्तु ऐसे कठिन समय में भी माता का स्नेह न माना, वह अपने पति अर्थात् मेज़िनी के पिता से छुपाकर छठे महीने मेज़िनी को खर्च भेजा करती थी। इस कार्य में मेज़िनी की एक बहिन ने भी अपनी माता को बहुत सहायता पहुँचायी। मेज़िनी को उस समय यह पता नहीं लगा कि किस कठिनता से उसकी माता धन भेजती है।

का यश-सौरभ यहां तक फैला कि यूरोप के बड़े बड़े राज्य मेज़िनी के नाम से कांपने लगे—सुना जाता है, उस समय मैज़िनी की चिट्ठियां तक खोल ली जाती थीं। उसी समय मैजिनी ने इटालियन कारीगरों तथा मजदूरों को शिक्षित करने के लिये एक एसोसियेशन स्थापित किया था। कहने का सारांश यह है कि चाहे जिस अवस्था में मेज़िनी रहा, पर वह अपने देश को नहीं भूला। रातदिन उसे अपने देश की ही धुन सवार रहती थी। प्रत्येक स्थिति में वह अपने देशवासियों में राष्ट्रीयता का भाव फैलाता रहा। यों तो प्रेम की बहुत सी कहानियां सुनने में आती हैं—संसार में देखा जाता है कि बहुत से लोग किसी नायिका अथवा प्रेयसी के प्रेम में अपना सर्वस्व गँवा बैठते हैं, परन्तु मेज़िनी का वैसा तुच्छ प्रेम न था, उसका देश के प्रति प्रेम सर्वोपरि था। कितनी ही स्त्रियां उससे विवाह करने के लिये आई, परन्तु वह किसी से विवाह करने को राज़ी न हुआ। उसे अपने देश की दुर्दशा के सामने सब तुच्छ प्रतीत हुआ।

दसवां परिच्छेद

—○:०:○—

जागोनी के चिन्ह

"People once awakened and rightly cau not be put down"

—Lala Lajpatrai

मेज़िनी का प्रयत्न निष्फल नहीं गया। उसके लगातार प्रयत्न से देश में जागृति फैलने लगी। मेज़िनी के हृदय में अपने देश की स्वतन्त्रता के लिये जो भाव उठ रहे थे, वे भाव उस समय की इटली की तरुण पीढ़ी के भाव थे। मेज़िनी के निरन्तर उद्योग का यह फल हुआ कि इटली के नवयुवकों में जागृति फैल गई। सन् १८३३ में मार्शल नगर में गेरीबाल्डी ने मेज़िनी से भेट की। मेज़िनी और गेरीबाल्डी का यह मिलाप बड़े शुभ मुहूर्त्त में हुआ था। दोनों एक ही पथ के पथिक थे। दोनों का उद्देश्य एक ही था। दोनों के हृदय की महत्वाकांक्षाएं अपने देश की पराधीनता की बेड़ियां तोड़ने की थीं। मेज़िनी कितना गुणग्राहक था, इसका पता केवल इस घटना से लगता है कि जब अमेरिका के दक्षिण विभाग में गेरीबाल्डी के नाम की धूम मच रही थी, तब मेज़िनी ने उसके कार्य्यों का वृत्तान्त प्रकाशित करके उसकी कीर्त्ति बढ़ा दी थी। किसी किसी का कहना है कि जब गेरीबाल्डी सन् १८४८ में लौटकर आया, तब समस्त देश ने उसे एक स्वर से अपना नेता स्वीकार कर लिया। इसका कारण केवल मेज़िनी के लेख थे। यदि मेज़िनी ने गेरीबाल्डी के सम्बन्ध में अखबारों में लेख प्रकाशित न किये होते तो गेरीबाल्डी का इतना नाम न होता।

जिन लोगों का गेरीबाल्डी के सम्बन्ध में ऐसा अनुमान है, उन से हम सहमत नहीं हैं। तथापि यह कहे बिना नहीं रह सकते हैं कि मेज़िनी गुणग्राही था, स्वयं उसको किसी ओर से उत्साह प्राप्त न होने पर भी वह दूसरों को खूब उत्साहित करता था। इसी से उसने *गेरीबाल्डी का उत्साह बढ़ाने के लिये लेख लिखे थे, जिनके कारण गेरीबाल्डी की कीर्त्ति-कौमुदी का अच्छा विस्तार हुआ। अस्तु, इतनी लम्बी-चौड़ी दन्तकथा का तात्पर्य यह है कि मेज़िनी ने अपने उपदेशों के बल से समस्त देश में जातीयता और स्वतन्त्रता के भाव उत्पन्न कर दिये थे। इसका परिणाम इटली के भविष्य के लिये शुभ हुआ।

सन् १८४६ में बूढ़े पोप गरगरी सोलहवें का देहान्त हो

---

* गेरीबाल्डी ने भी मेज़िनी के समान अपने देश के लिये अनेक कष्ट सहन किये थे। सन् १८०७ मे गेरीबाल्डी का जन्म नाईस नामक स्थान में हुआ था। मेज़िनी को भांति इसकी माता भी सुशिक्षिता थी। एक वार गेरीबाल्डी ने स्वयं अपने एक मित्र से अपनी माता के संबध मे कहा था कि जो लोग मुझे निर्भीक तथा मेरा योग्यताओं को देखकर आश्चर्य करते हैं वे इस बात से अनभिज्ञ हैं कि माता ने बालपन मे मुझे कैसी उत्तम शिक्षा दो थी। गेरीबाल्डी के पिता की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी, तथापि उसने पुत्र को शिक्षा देने मे कमी नहीं रखी। लड़कपन में गेरीबाल्डी को समुद्रयात्रा का बड़ा शौक हो गया था। गेरीबाल्डी की स्त्री एनिटा भी बडी बहादुर थी, उस वीरबाला ने गेरीबाल्डी के साथ युद्ध मे बहुत कष्ट सहन किये थे। इस समय यूरोप में जो महा संग्राम हो रहा है, उस में अभी गेरीबाल्डी का एक पौत्र भी वीरगति को प्राप्त हुआ है। गेरीबाल्डी का देहान्त सन् १८८२ में हुआ था। गेरीबाल्डी की जीवनी का विशेष वृत्तान्त लेखक की "वर्त्तमान इटली के निर्माता" नामक दूसरी पुस्तक में लिखा हुआ है।

गया और पायोनो (Piono) उसकी गद्दी पर बैठा। नये पोप ने तरुण इटली को शान्त करने के लिये बड़ी मीठी मीठी बातें बनानी शुरू कीं। उसने युवा इटली को फुसलाने के लिये एक चालाकी चली। गद्दी पर बैठते ही उसने राजनीतिक अपराधियों को क्षमा करने की सूचना दे दी। उसने और भी कुछ सुधार करने आरम्भ कर दिये। ग्रीष्म ऋतु में जैसे प्यासे मृग को बालुका-स्थान पर पानी का भ्रम हो जाता है वैसे ही इटली-वासी पोप के माया-जाल को पहचान न सके। प्रायः देखा जाता है कि जो जाति वर्षों से पराधीन रहती है, उसके मस्तिष्क की शक्तियां भी सड़ जाती हैं। जिस भांति एक तालाब में पानी बन्द रहने से सड़ जाता है, वैसे ही पराधीन जाति की मस्तिष्क की शक्तियां काम लेने का अवसर न आने से निकम्मी पड़ जाती हैं। यही दशा उस समय के इटलीवासियों की हुई। वर्षों से पराधीनता की बेड़ी में जकड़े रहने के कारण, उनके मस्तिष्क की शक्तियां इतनी रद्दी हो गई थीं कि उन्होंने पोप के विषय में धोखा खाया; पर मेज़िनी बुद्धि से ऐसी शत्रुता नहीं रखता था कि जो पोप की बनावटी बातों में फँसकर अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जाता। मेज़िनी ने पोप की बातों में न फँसकर उलटी उसकी सच्चाई की परीक्षा की। उसने पोप के पास एक चिट्ठी भेजी, जिसमें यह अनुरोध किया था कि धार्मिक तथा राष्ट्रीय सुधारों के लिये यह अच्छा अवसर है। भला अग्नि-परीक्षा में नकली सोना कब तक ठहर सकता है! अन्त में पोप के ढोल की पोल खुल गई। पोप "यथा वाणी तथा पाणी" न निकला। जिस स्वदेशानुराग की वह डींग हांकता था उसका वह स्वदेशानुराम "हाथी के दांत खाने के और, और दिखलाने के और" के समान हुआ। मेज़िनी के कारण पोप की कलई सब पर खुल गई।

इसमें सन्देह नहीं कि उस समय इटली में स्वतन्त्रता के भाव बड़ी तेजी से फैल रहे थे। उस समय इटली में कितनी ही सभाएं ऐसी थीं कि जो ऊपरी उद्देश्य कुछ और रखतीं थीं, पर भीतरी कार्य्य उनका कुछ और था। जेनोआ की वैज्ञानिक महासभा (Scientific congress) और कैसेले (Casele) की कृषि महासभा (Agricultural congress)—दिखाने को कृषि और वैज्ञानिक सभाएं थीं; पर भीतरी तौर पर राजनीतिक कार्य्य करती थीं। कैसेले की महासभा में पेडमान्ट के चार्ल्स एलबर्ट ने— Count of Castegnefo को एक पत्र वहां के प्रतिनिधियों को सुनाने के लिये भेजा, जिसमें निम्न शब्द थे— "Austria has sent a note to all the powers, in which she declares her wish to retain Ferrara, believing she has a right to it........ ...If providence sends us a war of Italian independance, I will mount my horse with my sons. I will place myself at the head of any army..... ......what a glorious day it will be in which we can raise the cry of war for the independence of Italy"—इसका भावार्थ

यह है कि आस्ट्रिया ने सब शक्तियों को पत्र भेज दिया है कि उसकी इच्छा फेरेरा को रखने की है। क्योंकि आस्ट्रिया का विश्वास है कि फेरेरा को रखने का उसे स्वत्व है। यदि परमात्मा ने इटली की स्वतन्त्रता के लिये यह युद्ध कराया, तो मैं अपने घोड़े पर अपने लड़कों के साथ सवार होऊंगा। मैं अपने को सेना के शिरोभाग में रखूंगा। वह कौन सा शुभ दिन होगा, जब हम इटली की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध की आवाज उठावेंगे!"

बादशाह की इस घोषणा से और भी उत्तेजना बढ़ गई। कांग्रेस ने बादशाह से इटली के इस आन्दोलन में अगुआ होने तथा स्वतन्त्रता के लिये तलवार को शरण ग्रहण करने के लिये प्रार्थना की।

समझे पाठक! राज्यक्रान्ति के समय इटली की ऐसी परिस्थिति थी। इटली ही क्यों, उस समय समस्त यूरोप में ऐसी ही लहर बह रही थी।

ग्यारहवां परिच्छेद

——:०:——

स्वतन्त्रता का युद्ध

"कहां वीर हो, बेगि धाओ सुधाओ,
सबै फौज आगे बढ़ाओ बढ़ाओ।
अरे वीरता को दिखाओ दिखाओ,
अबै जै-पताका उड़ाओ उड़ाओ।
अरे म्यान सों शस्त्र खोलौ सुखोलौ,
अरे मार मारौ, धरौ मार बोलौ।
अरे शत्रु को सीस काटौ सुकाटौ,
अरे कायरैं दौरि डांटो सुडांटौ।
सबै युद्ध भारी मचाओ मचाओ,
अरे शत्रु-सैनै भगाओ भगाओ"
—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

सन् १८४८ में फ्रांस की राजधानी पेरिस में पुनः राज्यक्रान्ति हुई और दूसरा प्रजातन्त्र राज्य स्थापित हुआ। जिसका प्रभाव यूरोप के बहुत से भागों पर पड़ा था। फिर भला ऐसे समय में इटली क्यों चुप रहने लगा? सन् १८४७ में लौम्बार्डी और सन् १८४८ में सिसिली में विद्रोह हुआ। जिस भांति जङ्गल में आग लगने से सारे जङ्गल में अग्नि की लपटें दौड़ जाती हैं वैसे ही यह राज्यक्रांतिरूपी अग्नि समस्त इटली में प्रज्वलित होगई। इस समय गेरीबाल्डी ने सार्डेनिया के राजा चार्ल्स एलबर्ट को सहायता देनी चाही, परन्तु चार्ल्स का मिजाज़ आसमान पर

चढ़ा हुआ था। उसने अभिमान के कारण—गेरीबाल्डी की सहायता स्वीकार नहीं की। "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः"—इस समय चार्ल्स एलबर्ट की भी यही दशा हुई।

राजा चार्ल्स एलबर्ट के इस व्यवहार से दुखित होकर, गेरीबाल्डी ने कर्नल मेसिडिन से मिलना निश्चय कर लोम्बार्डी और पेडमान्ट में अत्यन्त शीघ्रता से पांच हजार सेना इकट्ठी कर ली। सेना सहित जब ये लोग शत्रुओं की सेना पर चढ़ाई करने को तैयारी कर रहे थे तब इन लोगों को ज्ञात हुआ कि नेपल्स पराजित होगया। उस समय ये लोग आस्ट्रिया की सेना को भेदकर स्वीटज़रलेण्ड पहुँचे। उस समय पांच हजार मनुष्यों में से केवल पांच बचे थे। दोनों ओर की सेनाओं को इससे भारी हानि हुई। सिसिली के निवासियों ने नेपल्स राज्य के विरुद्ध बलवा कर दिया। कहा जाता है कि इन विद्रोहों के करनेवाले बराबर मेज़िनी से चिट्ठी-पत्री-द्वारा सम्मति लेते रहे और पेडमान्ट तथा टसकनी के राष्ट्रीय दल से परस्पर पत्रव्यवहार रहा।

मिलन में भी विद्रोह फूट निकला। मिलन के निवासियों के पास अस्त्र-शस्त्र नहीं थे। आस्ट्रिया ने एक चतुर सैनिक रेडैट्सर्की के अधीन मिलन में बड़ी सेना रखी थी। जिस भांति बिना जल के मीन तड़फ कर मर जाती है, मणि खो जाने पर सांप सिर पटक पटक कर मर जाता है, वैसी ही दशा मिलन-वासियों की हुई। वे विना हथियारों के कब ठहर सकते थे? रेडेट्सर्की ने दो घण्टे की लड़ाई में नागरिकों से म्युनिस्पल्टी का घर छीन लिया और आस्ट्रिया के सम्राट को लिख भेजा कि विद्रोह शीघ्र शान्त हो जायगा। परन्तु वाह रे मिलन-

वासियों का देश-प्रेम, वे रेडेट्सकी की जीत से हतोत्साह न हुए, उन्होंने रात्रि भर में बैरों से बचने के लिये बहुत से टीले बना लिये, लोगों को जो कुछ मिला—गाड़ी, बेञ्च, चारपाई, बिस्तरा, बाजा, प्रभृति सब सामान टीले बनाने में बेच दिये। १५०० पन्द्रह सौ से ऊपर टीले रात्रि भर में बन गये। पांच दिन के बाद आस्ट्रिया के रेडेट्सकी को मिलन छोड़ देना पड़ा। मार्च के अन्त तक वेनिस से भी परदेशियों की सेना निकल गई। इस अवसर पर टसकनी के ग्राण्ड ड्यूक को भी अपने राज्य के बचाने का और कोई उपाय न रहा और उसने भी आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। पेडमान्ट के बादशाह चार्ल्स एलबर्ट को भी राष्ट्रीय झण्डे के नीचे आना पड़ा और वह भी आस्ट्रिया से लड़ने को तैयार हुआ। जेनेवा में सब से पहले स्वेच्छासेवक एकत्रित हुए। दस हजार रोमन्स तथा सात हजार टसकनी वाले अस्त्र-शस्त्रों से सज धज कर लाम्बार्ड-निवासियों को सहायता के लिये तैयार हो गये। टसकनी के ग्रांड ड्यूक ने अपनी सेना से इस युद्ध के लिए बड़े जोशीले शब्दों में अपील की थी। जिसका भावार्थ यह है:—"सैनिको! अब लोम्बार्डी के क्षेत्र में इटली की पवित्र स्वाधीनता का निबटारा होगा। अभी मिलन के नागरिकों ने अपना रक्त बहाकर और ऐसी वीरता दिखला कर, जिसके उदाहरण इतिहास में बहुत कम मिलते हैं, स्वतन्त्रता को खरीद लिया है। यद्यपि सारडिनिया की सेना अपने वीर राजा की अध्यक्षता में युद्धक्षेत्र में जा रही है, इटली के पुत्र, उनके पूर्वज टसकनों की प्रतिष्ठा के अधिकारी, ऐसे अवसर पर विश्राम से नहीं रह सकते हैं। जाओ! और तुम उन वीर नागरिकों में सम्मिलित हो जो स्वेच्छासेवक हो

कर एक ही झण्डे के नीचे अपने लोम्बार्डी भाइयों की रक्षा के लिये आ रहे हैं।" जब किसी समाज अथवा देश के आदर्श बदल जाते हैं तब उस समाज अथवा देश के निवासियों की रुचि भी बदल जाती है। उस समय इटली के निवासियों की रुचि भी पलट गई थी। अपनी प्यारी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के पवित्र युद्ध में धनाढ्य मनुष्यों ने भी धन की सहायता बिना व्याज के की थी। स्वेच्छासेवकों की सेना ने पराजित आस्ट्रिया की सेना का पीछा आल्पस पर्वत तक किया। इस युद्ध से प्रायः उत्तर इटली, आस्ट्रिया के निवासियों से खाली होगया। कोई कोई कहते हैं कि केवल पचास हजार आस्ट्रियन्स शेष रह गये थे। उत्तर इटली आस्ट्रिया के पञ्जे से निकल कर बिलकुल स्वतन्त्र होगया था। लेकिन इतने पर भी आस्ट्रिया चुपचाप इटली को छोड़ देनेवाला न था। सारडिनिया के राजा चार्ल्स से पुनः आस्ट्रिया का युद्ध ठन गया। बाहर के शत्रु की अपेक्षा घर का शत्रु बड़ा भयानक होता है। स्वार्थ मनुष्यों को बड़े नाच नचाता है। बस, स्वार्थ के वशीभूत होकर ही, ईसाइयों के गुरु रोम के पोप ने अपनी पृथ्वी के स्वार्थ में फँसकर आस्ट्रिया की सहायता दी। उधर फ्रांस ने भी आस्ट्रिया की पीठ ठोंक दी। बस, आस्ट्रिया ने पोप और फ्रांस से सहायता प्राप्त कर के सारडिनिया के राजा चार्ल्स एलबर्ट को हरा दिया। बेचारे राजा चार्ल्स एलबर्ट ने अपने को सफल-मनोरथ न देख कर अपना राज्य अपने पुत्र विक्टर इमानुएल को दे दिया।

बारहवां परिच्छेद

रोम में प्रजातन्त्र राज्य

"Good government could never be a substitute for government by the people themselves."

(Sir Henry Campbell Bannerman.)

"मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की"-इधर इटली में उपर्युक्त घटनाएं हो रही थीं, उधर रोम में भी स्वतन्त्रता और जातीयता का भाव बढ़ रहा था। सर हेनरी कॅम्पबैल बैनरमैन का कथन है:—"अच्छा राज्य—प्रजातन्त्र शासन का प्रतिनिधि नहीं हो सकता है।" परन्तु उस समय रोम में अच्छा राज्य भी नहीं था, तब क्यों न लोकमत प्रजातन्त्र राज्य की ओर झुकता? रोम में भी बलवा हो गया और बलवा हो जाने पर भी पोप ने घोषणा की कि मैं इटली में आस्ट्रियन शक्ति के विरुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन में सम्मिलित नहीं होऊंगा। पोप यह घोषणा कर के ही चुप नहीं हुआ। उसने रोम के कार्यों के सम्बन्ध में सब से ऊंचा एक कर्मचारी, जो कुछ उदार विचार का भी था; जिसका नाम काउन्ट रोशी था, नियुक्त किया। नवम्बर के मास में काउन्ट रोशी मारा गया। इसका कारण यह था कि वह राज्य-क्रान्ति के समय में दब्बू नीति प्रचलित करना चाहता था। पोप डर के मारे भाग गया। टसकनी के ग्रेण्ड ड्यूक भी राज-पाट छोड़-कर भाग गये। नवीं फरवरी को पार्लीमेण्ट ने प्रजातन्त्र राज्य की घोषणा कर दी। मेज़िनी भी

रोमन पार्लीमेण्ट का सभासद निर्वाचित हुआ। वह शीघ्र ही रोम की ओर चला गया। मार्ग में वह टसकनी में भी ठहरा। टसकनी में ग्रैण्ड ड्यूक के चले जाने से एक प्रोविजनल गवर्नमेंट नियत हो चुकी थी। मेज़िनी समझता था कि टसकनी के लोग अपनी स्वतन्त्रता स्थिर न रख सकेंगे। उसने टसकनी वालों को, प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करके, रोम के साथ मिलने का परामर्श दिया, जिससे इटली को एक करने में सुगमता प्राप्त हो। सर्वसाधारण मेज़िनी के इस परामर्श से समहत हुए, परन्तु टसकनी को मेज़िनी का यह परामर्श अच्छा न मालूम हुआ। अस्तु। मेज़िनी रोम चला गया।

रोम में पहुँचते समय मेज़िनी को कैसा आनन्द प्राप्त हुआ था। इस विषय में मेज़िनी के शब्द सुनने योग्य हैं। वह लिखता है:—"मेरे बालपन में रोम मेरा स्वप्न था, मेरी मानसिक धारणा के लिये रोम उच्च स्थान था। मेरी बुद्धिरूपी इमारत के लिये रोम एक कुञ्जी थी। वह मेरी आत्मा का धर्म था। शहर में प्रवेश करते समय मुझ में भय और आदर दोनों का सञ्चार हुआ। जैसे मैं पोर्टाडेल पोपोलोभ में होकर निकला, मुझ में एक विद्युत्शक्ति सी दौड़ने लगी। मुझे नवीन जीवन सा प्रतीत होने लगा। मुझे रोम के फिर दर्शन न होंगे; परन्तु मृत्यु समय परमात्मा और अपनी जन्म देनेवाली प्यारी जन्मभूमि के साथ ही साथ रोम का भी स्मरण रहेगा। और भाग्य चाहे जहां मेरी हड्डियां गड़वा दे, परन्तु मुझे विश्वास है कि जब इटली में एकता होने पर प्रजातन्त्र राज्य की पताका रोम के मुख्य स्थानों पर फहरायेगी, तब तो मेरी हड्डियों से भी उत्साह की उमङ्ग उठने लगेगी।" मेज़िनी के इन शब्दों में उसकी रोम के प्रति हार्दिक श्रद्धा और भक्ति प्रकट

होती है। यद्यपि आज इटली में मेज़िनी का चाहा हुआ प्रजातन्त्र राज्य का झण्डा नहीं है, तथापि आज इटली में एकता है, उदारतापूर्ण संगठित राज्य है। प्रजातन्त्र राज्य स्थापित होने पर भी रोम में शान्ति का सञ्चार न हुआ। उस समय रोम और इटली के भाग्य में शान्ति से बैठना नहीं बदा था। थोड़े ही दिन प्रजातन्त्र का सुख भोग कर रोम को पुनः युद्धक्षेत्र में अपनी स्वतन्त्रता स्थिर रखने के लिये आना पड़ा।

तेरहवां परिच्छेद

—— .o: ——

रणचण्डी का नाच

"शरीरं वा पातयेयम्, कार्य्यम्वा साधयेयम्।"

रोम में प्रजातन्त्र राज्य के स्थापित होने तथा इटली की बागडोर द्वितीय विक्टर इमानुएल के हाथ में आने पर भी रणचण्डी इटली से प्रसन्न नहीं हुई। उसने पुनः अपना नृत्य आरम्भ करने की तैयारी की। इटली पर से युद्ध के काले काले, डरावने बादल टले नहीं। इस समय इटली की बड़ी शोचनीय दशा थी। इस समय इटली में दो दल हो गये थे। एक तो ईसाइयों के गुरु पोप के पक्षपातियों का था, जो सब प्रकार के सुधारों का विरोधी था। जितनी कुरीतियां और अत्याचार फैल रहे थे, उनका पक्षपाती था। इस समय इटली में ऐक्य की बड़ी जरूरत थी। आस्ट्रिया ने रोम के प्रजातन्त्र राज्य को चकनाचूर करने के लिये "Divide and Rule" अर्थात् भेद-भाव का प्रचार करके, शासन करने की नीति प्रचलित की— "निर्बल की जोरू सबकी भौजाई" यह कहावत ठीक ही है। आस्ट्रिया के अतिरिक्त फ्रान्स का दांत भी इटली पर लगा हुआ था। लुइस नेपोलियन, जो उस समय फ्रान्स के प्रजातन्त्र राज्य के राष्ट्रपति हुए थे, उन्हों ने पञ्चायती राज्य को नष्ट करने के लिये फ़रासीस सेना भेजी। फ्रान्स ने उस समय रोम को अपने स्वार्थ-सम्बन्ध के लिये हड़पना चाहा था। एक लेखक (M. Thiers) लिखता है :—

" न तो हम रोमन कैथोलिकों के लिये, न रोम के आद्मियों के लिये रोम में गये। हमारे वहां जाने का, अर्थात् रोम पर चढ़ाई करने का, कारण फ्रांस था।" पाठक, उक्त लेखक के शब्दों को पढ़कर, उस समय फ्रान्स की नीयत कैसी थी, सो पहचान गये होंगे। यूरोप के प्रायः समस्त राष्ट्र अपने स्वार्थ के सामने दूसरे देश के स्वार्थ की किञ्चित् चिन्ता नहीं करते हैं, अपने स्वार्थ की रक्षा के लिये दूसरे देश के स्वार्थ का मटियामेट तक कर देते हैं। बस, इस विचारवश उस समय फ्रान्स ने भी इटली के प्रजातन्त्र राज्य को मटियामेट करना चाहा। फ़रासीसी सेना लगभग पैंतीस हजार के थी। रोम-निवासियों ने इस युद्ध में अच्छी वीरता दिखलायी। वे बड़े साहस से फ्रान्स की सेना से लड़े। परन्तु मुट्ठी भर रोम पैंतीस हजार फ्रान्स सेना के सामने कहां तक ठहर सकते थे, अन्त में रोम का पतन हुआ। फ्रान्स की सहायता से पोप ने पुनः शक्ति प्राप्त की। "चार दिना की चांदनी और वही अन्धेरी रात," इस कहावत के अनुसार प्रजातन्त्र राज्य पर वज्रपात हुआ।

चौदहवां परिच्छेद

—:०:—

पुनः शनि की दृष्टि

"उचितमनुचितं वा कुर्वते कार्यजातं।
न तदपि परितापं यान्ति धृष्टाः कदापि॥"

इटली की बातें सुनाते सुनाते हमने बीच में पाठकों की सेवा में रोम के प्रजातन्त्र और पतन का वृत्तान्त भी उपस्थित कर दिया है। अतएव हम पुनः अपने मुख्य विषय की ही चर्चा करते हैं। जब बेचारा मेज़िनी रोम में प्रजातन्त्र शासन-प्रणाली स्थापित करने में इस भांति लगा हुआ था, उधर आस्ट्रिया भी चुप नहीं था। उसने भी अपना अधिकार जमाने की चेष्टा की। यह हम ऊपर कह आये है कि विक्टर इमानुएल ने जिस समय अपने बाप से राजसिंहासन ग्रहण किया था, उस समय इटली मे दो दल थे। एक तो ईसाइयों के गुरु पोप के पक्षपातियों का था, जो अन्ध लकीर का फकीर बना हुआ था और सब प्रकार के सुधारों का विरोधी था, जितनी कुरीतियां और अत्याचार फैल रहे थे, उनको दूर करना नहीं चाहता था। दूसरा प्रजा के शासन का पक्षपाती था। विक्टर इमानुएल ने दोनों दलों से बचकर चलना चाहा। सिंहासन पर बैठते ही दूसरे दिन वह आस्ट्रिया के सैनिक रैडेट्सकी के यहां स्वयं गया। सेनापति ने उसको समझाया कि यदि वह उन नियमों को छोड़कर, जो उसके पिता ने बनाये थे, पुराने नियमों पर चले, तो अच्छा हो। आस्ट्रिया उसके राज्य में से

कुछ भी पृथ्वी नहीं छीनेगा; किन्तु वह अपना राज्य और अधिक बढ़ा सकेगा। विक्टर आस्ट्रिया के इन नियमों को पालने को तैयार न हुआ। सेनापति के विशेष अनुरोध करने पर विक्टर ने जो उत्तर दिया, वह उसी के शब्दों में सुनने योग्य है :—

"सेनापति! इस तरह की शर्त स्वीकार करने की अपेक्षा मैं सैकड़ों राजमुकुट खो दूंगा। मेरे पिता ने जो कुछ शपथ ग्रहण की है, मैं उसी का पालन करूंगा। यदि तुम मृत्यु के लिये लड़ाई चाहोगे तो वैसा ही होगा। मैं अपनी जाति को युद्ध के लिये एक बार बुला लूंगा, तब तुम देखोगे कि साधारण उत्थान में पेडमाएट किस योग्य है। यदि मेरा पतन होगा तो भी कोई लज्जा की बात नहीं है। मेरा घराना अपमान की अपेक्षा देश-निर्वासन अच्छी तरह से जानता है।" आस्ट्रिया के सेनापति से विक्टर की पांच मास, एप्रिल से अगस्त तक, लगातार सन्धि की बात-चीत होती रही। अन्त में विक्टर को बहुत द्रव्य दण्डरूप में आस्ट्रिया को देना पड़ा। आस्ट्रिया की सेना ने इटली के गढ़ों पर अधिकार कर लिया। परन्तु इतने पर भी विक्टर और उसके मन्त्री ने आस्ट्रिया से यह शर्त करा ली थी कि, आस्ट्रिया को उन व्यक्तियों के अपराध क्षमा करने होंगे, जिन्होंने आस्ट्रिया के विपक्ष मे हथियार उठाया है। आस्ट्रिया ने विक्टर की यह शर्त्त स्वीकार नहीं की। विक्टर और उसके कर्मचारी अपनी बात पर दृढ़ रहे। सारडिनिया को बहुत हानि उठानी पड़ी, पर अन्त में आस्ट्रिया को लगभग सब विद्रोह करनेवालों को क्षमा करना पड़ा। परन्तु इस सन्धि से इटली में कुछ शान्ति नहीं हुई।

आस्ट्रिया के सिर पर फिर भूत सवार हो गया। उसने

पुनः अनेक बहाने करके प्रजा को दुःख देना आरम्भ कर दिया। रोम का पोप भी अपने राज्य में लौट आया और वह भी मनमाने अत्याचार करने लगा। फ्रान्स के सम्राट तृतीय नेपोलियन ने रोम के पोप को बहुत समझाया, पर उसने एक न मानी, वही पुरानी ११वीं और १२वीं शताब्दी की कुरीतियां १९वीं शताब्दी में जारी रक्खीं। नेपल्स में अत्याचार होने लगे। उदार विचार के आठ सौ मनुष्यों को बुरी यन्त्रणाएं पहुँचाई गईं। पुलिस लोगों को तङ्ग करती थी। चाहे जिसको पकड़ लेती थी। उस समय का अपनी जेल का कुछ वर्णन एक देशभक्त ड्यूक सिजिसमांड्यो केस्टोनीडियानों ने किया है। इस देशभक्त ने अपनी जेल की कहानी वृद्धावस्था में लिखी थी। जिसमें वह कहता है कि जीवन का वह समय बुरा था जब वह छः कैदियों के साथ बुलाया गया था, जिन्हों ने मुआफी मांगी थी। सिजिसमांड्यो केस्टोनीडियानों को भय था कि वे क्षमा कर दिये जांयगे। परन्तु यह भय निर्मूल निकला। उनके चरित्र पर देशद्रोही होने का धब्बा लगाया गया। इसके अतिरिक्त जो लोग ऐसे समाचार-पत्र निकालते थे, जिनमें सरकार के विरुद्ध कुछ लिखा होता था, वे तत्काल फांसी पर चढ़ा दिये जाते थे। इस समय विक्टर ने एक और काम किया कि पादड़ियों की निराली कचहरियां बन्द करवा दीं। इस बीच में सन् १८५० में * कैबूर

---

* कैबूर बड़ा भारी राजनीतिज्ञ था। उसका जन्म १०वीं अगस्त सन् १८१० को हुआ था। मेज़िनी और कैबूर में परस्पर बड़ा मतभेद रहा। कैबूर नरम दल तथा नियमबद्ध आन्दोलन Constitutional agitation का पक्षपाती था। कैबूर के सम्बन्ध में अनेक इतिहास-लेखकों का पार-

सार्डिनिया राज काज में भर्त्ती हुआ और दो वर्ष पीछे वह मन्त्री हुआ।

स्परिक मतभेद है। जिससे कुछ निश्चय नहीं किया जा सकता है। किन्तु यह बात सब एकमत से स्वीकार करते हैं कि कैवूर भी वर्त्तमान इटली के निर्मोताओं में से एक था। एक दलवाले उसे राजनीतिज्ञ कहते हैं और दूसरे दलवाले उसे देशद्रोही कहते है। कैवूर का विशेष वृत्तान्त लेखक की दूसरी पुस्तक—"वर्त्तमान इटली के निर्माता" में दिया है। कैवूर का देहान्त सन् १८६१ मे हुआ था। अभी जो पिछले दिनों मे महात्मा गोखले समस्त देशवासियों को रुला कर परलोक चल बसे हैं, उनके सम्बन्ध में बहुत से लोगों का कहना है कि वे कैवूर के ढंग के राजनीतिज्ञ थे।

पन्द्रहवां परिच्छेद

—○.०:○—

फिर भाग्य की परीक्षा

"अधोमुखस्यापि कृतस्य बह्नेर्नाधः शिखा याति कदाचिदेव"

—कालिदास

जिनके मन में किसी कार्य की लौ लगी हुई होती है, वे बार बार की असफलताओं से कभी निराश नहीं होते हैं। इटली-निवासियों को भी स्वतन्त्रतादेवी की प्रसन्नता के लिये बार-बार द्वन्द करना पड़ा। रुई के ढेर में आग की चिनगारी छिपाने से नहीं दब सकती है, वैसे ही इटली-निवासियों के स्वतन्त्रता के भाव दबाने से नहीं दब सके। सन् १८५३ में मिलन में फिर विद्रोह आरम्भ हुआ, परन्तु उसमें मिलन के लोग सम्मिलित नहीं हुए। कहा जाता है कि मिलन का यह विद्रोह वहां के कारीगरो के बड़े परिश्रम का फल था। जब मेज़िनी को इस विद्रोह का समाचार मिला तब उसने एक सैनिक को वहां की परिस्थिति देखने और यह विचार करने के लिये भेजा, कि वहां स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है या नहीं। उस सैनिक ने देख-भाल कर मेज़िनी को लिखा कि सफलता की आशा है। मेज़िनी ने वहां के लोगों की द्रव्य से सहायता की; पर यह सोच कर कि कहीं वे पकड़ न लिये जांय, अस्त्र नहीं भेजे। मेज़िनी ने उनको अस्त्रों के सम्बन्ध में लिख दिया:—"जो लोग मरने-मारने पर उतारू हो जाते हैं वे शत्रुओं के शस्त्र छीन कर उनसे काम लेते हैं, जैसा कि सन् १८४८ में हुआ था।" लोगों की मेज़िनी पर इतनी भक्ति थी कि उन्होंने मेज़िनी के इस कथन को ईश्वरीय सन्देश समझा और लड़ने को तैयार हो गये। लड़ने की तैयारियां छिपे छिपे की गईं। मिलन के

प्रत्येक भाग में मनुष्य नियत कर दिये गये और सबको समझा दिया गया कि नियत समय पर सब बिगड़ खड़े हों। यह प्रबन्ध यहां तक कर लिया गया कि जिस समय मिलन के विद्रोह के समाचार लोम्बार्डी में मिलें, उसी समय वहां की नेशनल पार्टी स्वतन्त्रता के लिये झगडा खड़ा कर दे। खेद है, एक नेता ने सारा काम मटियामेट कर दिया। क्योंकि यह पहले निश्चय हो चुका था कि अमुक स्थान पर आक्रमण उस समय आरम्भ हो, जब पहले नेता की ओर से इशारा कर दिया जाय। पर उस नेता ने यह कपट किया कि वह ठीक समय पर भाग निकला। जो लोग नियत समय पर वहां एकत्रित हुए थे, वे इस नेता के कपट को समझ न सके। उन्होंने समझा कि नेताओं का इस कार्य के करने का विचार नहीं रहा है अथवा इस कार्य का पता राजकर्मचारियों को लग गया है। इस लिये वे लोग भी चलते बने। उनके दलों ने इस ढङ्ग से दो स्थानों पर आक्रमण किया कि आस्ट्रियन सेना में दो सिपाही और दो सेनापति मारे गये। इस उपद्रव के सम्बन्ध में आस्ट्रिया को यह कहने का अवसर मिल गया कि इस विद्रोह में वे लोग सम्मिलित थे, जो अस्ट्रिया की सरकार की सीमा से बाहर या तो चले गये, या निकाल दिये गये। यद्यपि यह सन्देह न था; परन्तु इस बहाने आस्ट्रिया ने लगभग एक हजार बड़े घरानों की पृथ्वी ज़प्त कर ली; और तेरह मिलन-वासियों को फांसी की आज्ञा दे दी। सारडिनियन मन्त्रियों ने आस्ट्रिया के इस कार्य को सन् १८४६ की सन्धि के विरुद्ध ठहराया था। सारडिनिया का प्रतिनिधि वाईना बुला लिया गया; और फिर दोनों देशों में लड़ाई के सामान हो गये, परन्तु लड़ाई बहुत दिनों तक रुकी रही।

सोलहवां परिच्छेद

—— .०. ——

भाग्योदय के चिन्ह

"पूर्वजन्मजनितं पुराविदः कर्मदैवमिति सम्प्रचक्षते ।
उद्यमेन तदुपार्जितं चिरादैवमुद्यमवशं न तत्कथम् ॥"

इस बीच में यूरोप में एक और संग्राम छिड़ गया । यह संग्राम—क्रीमिया के युद्ध के नाम से विख्यात है। क्रीमिया युद्ध की जड़ यह कही जाती है कि पूर्व यूरोप में कैथोलिक और ग्रीक चर्च के पादरियों में फिलिस्तीन देश के धर्ममन्दिरों पर आधिपत्य करने के विषय में झगड़ा उठा। यह देश रूम के अधिकार में था और रूम पर रूस का दबदबा था। इधर कैथोलिक सम्प्रदाय के नेता रोम के पोप का सहायक फ्रांच-सम्राट, रूसराज से लागडाट रखता था। बस, इस तरह से फ्रांस और रूस में लड़ाई ठहरी। इङ्गलेण्ड को भी यह भय था कि रूस का यदि रूम पर अधिकार रहा तो भूमध्यसागर में अवश्य ही उसका अधिकार हो जायगा। और फिर—सोने की चिड़िया हिन्दुस्तान पर भी रूस का दांत गड़ाना सहज है। इस लिये इङ्गलेण्ड ने फ्रांस को सहायता दी। दूरदर्शी कैवूर ने भी, इस युद्ध में इटली का भविष्य भाग्योदय समझ कर, योग देना उचित समझा। उस समय इटली की जनता ने, अपने देश का और देशों के झगड़े में पड़ना, पागलपन समझा था। परन्तु विक्टर ने किसी बात की चिन्ता न करके अपने मन्त्री का साथ दिया। कभी बुराई से भी भलाई निकल आती है,

अतएव इस लड़ाई में इटली का विशेष गौरव रहा *सारडेनिया के सिपाहियों की बहादुरी से इटली का यूरोप भर में महत्व फैल गया। युद्ध के पश्चात् १८५६ में जब सन्धि हुई तब उस अवसर को अच्छा देख कर कैवूर ने इटली की बात छेड़ दी, जिससे उस समय इटली ने अपने उद्देश्य और आकांक्षाओं की ओर अन्य देशों की सहानुभूति आकर्षण कर ली। इस युद्ध से ही पहले पहल इटली अन्य शक्तियों के समान समझा जाने लगा। आस्ट्रिया के प्रबल विरोध करने पर भी कैवूर पेरिस की कांग्रेस में सम्मिलित हुआ। कैवूर का इस कांग्रेस में सम्मिलित होना ही सारडेनिया और इटली के भाग्य को पलटने वाला हुआ। इस कांग्रेस में इङ्गलैण्ड की ओर से भी लार्ड कोले और लार्ड क्लोरेडन थे। इस कांग्रेस में आस्ट्रिया का भी मन्त्री था। परन्तु कांग्रेस में आस्ट्रिया के मन्त्री के होने पर भी कैवूर ने आस्ट्रिया के अत्याचारों के सम्बन्ध में स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचार प्रकट किये। कैवूर ने निडर होकर कहा था:—"आस्ट्रिया इटालियन स्वतन्त्रता का जानी दुश्मन है। इटली में स्वतन्त्र जाति के लिये यह भयानक विपत्ति है—और उस जाति को, जिसको यहां प्रतिनिधि होने का सौभाग्य प्राप्त है।" पर

* एक इतिहासलेखक इस युद्ध के सम्बन्ध में लिखता है:— "It was a solemn moment for the King and decided the fate of his country, that treatv was the fortune of Italy. To overcome so many difficulties the genius of Cavour was not enough there was needed firmness of Victor Emmanuel for without him the treaty would not have been concluded."—Massari.

आस्ट्रिया की बुद्धि पर उस समय इतना गहरा पर्दा पड़ गया था कि उसने इङ्गलेण्ड और फ्रांस के अनुरोध करने पर भी अपने शासन का कुछ भी सुधार करना उचित नहीं समझा। कोई कोई इतिहास-लेखक यह भी कहते हैं कि कैबूर ने कांग्रेस के पीछे लार्ड क्लारेडन से—जो इङ्गलेण्ड की ओर से प्रतिनिधि था, आस्ट्रिया के अत्याचारों के सम्बन्ध में बातचीत की थी, परन्तु कैबूर को लार्ड क्लारेडन की वार्त्तालाप से ऐसा सन्देह हो गया था कि उसको इङ्गलेण्ड से कुछ कम सहायता मिलेगी। बस, इस विचारवश उसने अपनी उच्चाकांक्षाओं को तीसरे नेपोलियन के भरोसे पूरा करना चाहा। कहते हैं, सन् १८५५ में तीसरे नेपोलियन ने कैबूर से पूछा कि मैं इटली के लिये क्या कर सकता हूं? कैबूर ने बिना किसी सङ्कोच के यह उत्तर दिया कि आप बहुत कुछ कर सकते हैं।

यह तय हुआ कि इटली के दो सूबे (मेनज़ा और सेवाई) फ्रेंच राज्य में मिला लिये जायंगे।

सन् १८५९ में आस्ट्रिया और सारडेनिया में लड़ाई छिड़ गई। दिसम्बर सन् १८५८ में कैवूर ने * गेरीबाल्डी को उस के घर से बुलवा लिया और स्वेच्छासेवकों की सेना का सेनापति बनाया। फ्रांस और सारडेनिया की सम्मिलित सेना के सामने आस्ट्रिया की सेना के पैर उखड़ गये। कुछ वश चलता न देखकर आस्ट्रिया ने फ्रांस से सन्धि कर ली। परन्तु इटली के भाग्य में उस समय भी सुख नहीं बदा था। फ्रांस ने आस्ट्रिया से मेल करके इटली की स्वतंत्रता को नष्ट कर दिया। वेनिस आस्ट्रिया के पास रहा। लोम्बार्डी पेडमान्ट के राजा को मिला। मोरडिना और टसकनी पूर्ववत् ड्यूकों के अधीन रहे। रूलोना पुनः पोप को दे दिया गया। इन सब प्रान्तों पर पोप राजा माना गया। इटली के इतने दिनों का परिश्रम व्यर्थ हुआ। सच पूछिये तो तीसरे नेपोलियन ने इटली का "बन्दर-बांट" कर दिया। मेज़िनी आरम्भ से ही इस युद्ध के विरुद्ध था। उस

से किसी डाकू की सहायता से एक चोर को निकाल दे, पर इसके बदले अपने घर के अगले और पिछले हिस्से की चाबियां डाकू को सौंप दे। वास्तव में उस समय इटली के नेताओं ने, विशेषतः कैवूर ने, यह कार्य किया था।

* यह कहावत ठीक ही है कि गुदड़ी में लाल नहीं छिपते हैं। जिस समय गेरीबाल्डी कैवूर से मिलने गया उस समय उसकी बहुत मामूली पोशाक थी। एक दिन प्रातःकाल यह कैवूर के घर पहुँचा। कैवूर के नौकर ने गेरीबाल्डी को भली भांति न पहचान कर अपने स्वामी को उसके आने की सूचना दी। कैवूर ने गेरीबाल्डी को न समझ कर अपने नौकर से कहा, उसे आने दो, मालूम होता है कि कोई ग़रीब शख्स मुझे अर्ज़ी

की भविष्यद्वाणी सच्ची निकली * । तीसरा नेपोलियन अपने मन में कुछ और ही सोचे हुए था, पर टसकनी की प्रजा को उसके "बन्दर-बांट" से प्रसन्नता नहीं हुई । अन्त में फिर लोगों के कथन का स्मरण होने लगा । ब्लोना तथा टसकनी की प्रजा ने फ्रांस के सम्राट तथा आस्ट्रिया के सन्धिपत्र के अनुसार रहना अस्वीकार किया । दोनों देशों की प्रजा ने पेडमाएट के अधीन रहने पर बल दिया । नेपोलियन ने कैवूर से उक्त प्रान्तों की बात न मानने के लिये इच्छा प्रकट की । फांस के सम्राट यह लिखकर ही चुप नहीं हुए, किन्तु उन्होंने अपने भाई को उक्त प्रान्तों का गवर्नर नियुक्त किया । पर इटली में उस समय लोकमत बहुत प्रबल था । इस लिए उक्त प्रान्तों का विरोध ऐसे प्रबल आन्दोलन द्वारा किया गया कि सम्राट नेपोलियन ने उक्त प्रान्तों को छोड़ देना ही अच्छा समझा । ब्लोना तथा टसकनी की वह अटल प्रतिज्ञा देख कर पेडमाएट-नरेश को उक्त प्रान्त अपने अधीन रखने के लिये बाध्य होना पड़ा । मेज़िनी ने पुनः उपदेश आरम्भ कर दिया । उसके उपदेशों का सारांश यही था कि इटली को सब विरोध-भाव छोड़ कर एक हो जाना चाहिये । मेज़िनी की इस शिक्षा का इटली के लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा ।

देने आया है । इस भांति प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ कैवूर से सुविख्यात रणनीतिज्ञ गेरीबाल्डी की भेंट हुई ।

* मेज़िनी इस युद्ध के विरुद्ध था । उसने अपने देशवासियों को बहुत चेताया; पर किसी ने सुना नहीं । मेज़िनी कैवूर की नीति के विपरीत था । इस लड़ाई के भयङ्कर परिणाम को देखकर बहुत से लोग कैवूर को देश-द्रोही कहने लगे ।

अठारहवां परिच्छेद

—————:o:—————

सिसिली टापू का युद्ध और सन्धि-रहस्य

"The Goddess of liberty is the most sacred goddess in the world and before you can approach her, you should show by your life, life of selfdenial that your are fit to enter her temple."

—Lala Lajpatrai

मेज़िनी केवल उपदेशों की झड़ी बांध कर ही चुप नही हुआ, उसने सिसिली टापू में युद्ध का झण्डा उठाने की ठानी। उसे अपना यह उद्योग सफल होता भी दिखलाई पड़ने लगा। उसने गेरीबाल्डा को इस कार्य के लिये उभारा। पहले तो गेरीबाल्डी ने स्वीकार कर लिया, परन्तु अन्त में उसने सारडेनिया के बादशाह की बातों में आकर युद्ध के इस झण्डे को उठाना अस्वीकार किया। गेरीबाल्डी के अस्वीकार करने पर मेज़िनी ने इस युद्ध का भार अपने एक युवक मित्र पाइलो पर रखा। पाइलो सिसिली का रहनेवाला था। उसने इस युद्ध में बड़ी वीरता दिखलाई। दो सप्ताह तक वह बादशाही सेना के दांत खट्टे करता रहा। अन्त में वह वीरगति को प्राप्त हुआ; पर युद्धक्षेत्र से हटा नहीं।

कहावत है, खरबूजे को देखकर खरबूजा रङ्ग पलटता है। संसार का यह कुछ नियम ही है कि एक नाचनेवाले को देखकर दूसरे नाचनेवाले का कूला अपने आप फड़क उठता

है, एक गवैये को दूसरे गवैये का गान सुनकर गाने की तबियत होती है, वैसे ही वीरता का हाल है। इस भांति पाइलो को युद्ध में मरते देखकर गेरीबाल्डी ने भी इस युद्ध में योग दिया। बादशाह ने बहुत प्रयत्न किया, कि गेरीबाल्डी इस युद्ध में सम्मिलित न हो; परन्तु अन्त में गेरीबाल्डी को इस युद्ध में सम्मिलित होना पड़ा और उसको इसमें विजय हुई। गेरीबाल्डी को विजय पर विजय प्राप्त होती चली गई। इस समय तक मेज़िनी इटली में ही उपस्थित था। वह बेचारा छुपे छुपे स्वेच्छासेवक सेना की सहायता करता था। ७वीं सितम्बर को गेरीबाल्डी ने नेपल्स में प्रवेश किया। इस युद्ध में गेरीबाल्डी ने ऐसी वीरता प्रकट की कि * जन-साधारण उसमे दैवी शक्ति का अनुमान करने लगे। गेरीबाल्डी के आने पर नेपल्स-वासियों ने बड़ी प्रसन्नता प्रकट की। नेपल्स और सिसिली में इस समय कोई राज्य नही था। एक तरह से गेरीबाल्डी उसका कर्त्ता धर्त्ता विधाता हुआ।

इस भांति गेराबाल्डी को सफल होते देखकर कैवूर को भय हुआ और उसके इस अवसर पर भयभीत होने का एक कारण यह भी था कि मेज़िनी भी नेपल्स में था। कैवूर ने नवीन विजित प्रान्त को इटेलियन राज्य मे सम्मिलित करने का प्रस्ताव किया। उसने सेनापति पेरसानो को लिखा:— "विदेशियों से, बुरे सिद्धान्तों से और पागल आदमियों से इटली की रक्षा करनी चाहिये।" उसको डर था कि कहीं

---

* "Garibaldi was regarded rather as the hero of a mythical romance than an ordinary martal of flesh and blood."

—J. A. R. Marriott.

मेज़िनी के प्रजातन्त्र राज्य के सिद्धान्त का प्रभाव गेरीबाल्डी के हृदय पर भी न हो जाय। कहीं गेरीबाल्डी नेपल्स से रोम पर आक्रमण न कर दे। कैबूर अच्छी तरह से जानता था कि यदि ऐसा हुआ तो फ्रांस का सम्राट भी हस्तक्षेप करेगा। परन्तु कैबूर का चाहा कुछ न हुआ। इटेलियन गवर्नमेण्ट ने नये प्रान्त का सम्मिलित करना उचित समझा; लेकिन गेरी-बाल्डी ने स्पष्ट उत्तर दिया, :—"मैं तब तक नये प्रान्त को इटेलियन राजधानी में संयुक्त नहीं करूंगा जब तक इटली के राजा विक्टर इमानुएल की रोम में घोषणा न कर दूं।" कैबूर इस समय बड़ी सोचा-विचारी में पड़ा। अन्त में उसने बाद-शाही सेना को गेरीबाल्डी के मुकाबिले में भेजना निश्चय किया। बाहर जो इटेलियन राजदूत थे, उनको उसने लिखा :—

"लाकाटोलिका में गेरीबाल्डी के पहुँचने से पहले यदि हम वोलटरोनो न पहुँचे तो राज्य नष्ट हो जायगा और इटली सदैव राजद्रोह का शिकार बना रहेगा।" इस अवसर पर बादशाही सेना दक्षिण की ओर जा रही थी और गेरीबाल्डी की सेना उत्तर की ओर जा रही थी। कैबूर ने निश्चय कर लिया कि बादशाही सेना गेरीबाल्डी के आने से पूर्व रोम में पहुँच जाय। दूरदर्शी मेज़िनी, कैबूर की यह नीति समझ गया, उसने शीघ्र कैबूर की इस चाल से सावधान होने के लिये गेरी-बाल्डी को चेतावनी दी। गेरीबाल्डी को जो पत्र उसने भेजा था, उसका सारांश यह है कि यदि तुमने तीन सप्ताह से पूर्व रोम अथवा वेनिस की ओर कूच न किया तो तुम्हारा आरम्भ किया हुआ काम चौपट हो जायगा। मेज़िनी की यह चिट्ठी प्राप्त होने पर गेरीबाल्डी वोलटर्नो के उत्तरीय किनारे पहुँचा। पहली अक्टूबर को वोलटर्नो पर लड़ाई हुई। फरासीसी सेना

तितर-बितर हो गई। उसके बादशाह ने गेटा में शरण ली। गेरीबाल्डी का अपने राजा विक्टर इमांनुएल से भी मुकाबिला हुआ।

वीरवर गेरीबाल्डी जैसा युद्धक्षेत्र में पीठ दिखानेवाला नहीं था, वैसा ही वह अपनी बात का बड़ा पक्का और सच्चा था। बादशाह के नेपल्स में आने के पूर्व उसने वहां के जन-साधारण को बधाई की सूचना दी, जिसका आशय यह था कि कल जाति का निर्वाचित राजा विक्टर इमानुएल आवेगा। वह उस सीमा को तोड़ेगा, जिसने शताब्दियों से हमको देश के शेष भाग से पृथक कर रखा है। वह परमेश्वर का भेजा हुआ आ रहा है। उसका हमें हृदय से स्वागत करना चाहिये। अब हमको आपस का भेदभाव त्याग देना चाहिये, अब कोई राजनैतिक रङ्ग, दल अथवा विचार नहीं रहना चाहिये। इस भांति गेरीबाल्डी और राजा ने साथ ही साथ नेपल्स में प्रवेश किया—इस भांति गेरीबाल्डी, नयी प्रजा को राजा का परिचय देकर, बिना किसी लालसा के, बिना किसी प्रकार के आदर-सत्कार के, अपनी तलवार के बल से जीता हुआ देश राजा को समर्पित करके काप्रेरा को चला गया। *

इसके पश्चात् १८वी फरवरी १८६१ को वेनिस और रोम को छोड़ कर इटली के समस्त भागों के प्रतिनिधि टूरीन की पार्लीमेण्ट में पहली बार एकत्रित हुए। इस पार्लीमेण्ट का

---

* मेज़िनी गेरीबाल्डी के इस कार्य्य को सुनकर बड़ा अप्रसन्न हुआ। इस स्थल पर गेरीबाल्डी और मेज़िनी दोनों के भक्तों ने एक दूसरे को दोषी ठहराया है। गेरीबाल्डी के भक्तगण कहते हैं कि उससे बादशाह ने प्रतिज्ञा की थी कि मैं रोम पर आक्रमण करूंगा। मेज़िनी बादशाह के आने से पहले ही शहर छोड़ कर चल दिया।

सब से पहला कार्य नियमानुसार नयी राजधानी का स्थापित करना था। दूसरा कार्य राजा विक्टर इमानुएल के इटली के राजा होने की घोषणा करना था। परन्तु इस पर भी प्रायः सभी लोगों के चित्त में रोम और वेनिस का अलग रहना खटक रहा था। मेज़िनी का लक्ष्य बराबर अपने उद्देश्य की पूर्त्ति का था। उसने रोम पर चढ़ाई करने की प्रबल चेष्टा की। इसमें सन्देह नहीं कि कैवूर की इच्छा भी रोम को सम्मिलित करने की थी। किसी किसी इतिहास-लेखक का कथन है कि कैवूर ने कहा था, कि रोम के राजधानी हुए बिना क़भी इटली में "दृढ़ता से एकता का प्रचार नहीं हो सकता है।" परन्तु कैवूर और मेज़िनी की पारस्परिक कार्यप्रणाली में विशेष भेद था। मेज़िनी तो कैवूर की नीति से असन्तुष्ट था ही, किन्तु १८वीं एप्रेल को अपनी एक वक्तृता में गेरीबाल्डी ने भी कैवूर की नीति के सम्बन्ध में बहुत कड़े शब्द कहे थे। अस्तु सन् १८६२ में बहुत से व्यक्तियों ने गेरीबाल्डी से रोम पर आक्रमण करने के लिये विशेष अनुरोध किया। वह भी कुछ स्वेच्छा-सेवकों की सेना एकत्रित करके रोम पर आक्रमण करने को प्रस्तुत हुआ। किन्तु मेजिनी का अनुमान था कि बादशाह रोम पर आक्रमण करना स्वीकार नहीं करेगा। क्योंकि उसके रोम पर आक्रमण करने से सम्राट नेपोलियन के क्रोधित हो जाने का भय है। इसलिये पहले वेनिस को स्वतन्त्र कराने की चेष्टा की जाय। इसी विचार से मेज़िनी ने गेरीबाल्डी को रोम पर आक्रमण न करने की सलाह दी। परन्तु गेरीबाल्डी ने मेज़िनी की एक नहीं सुनी, और अन्त में बिना सोचे-विचारे उसने रोम पर आक्रमण करने की तैयारी कर दी। गेरीबाल्डी निष्कपट और सरल हृदय का था। उसने बादशाह के छल और

कपट को नहीं समझा। बादशाही सेना ने उसकी सेना का मार्ग रोक लिया, तब भी उसने यह आज्ञा दी कि बादशाही सेना पर गोली न चलाई जाय, क्योंकि गेरीबाल्डी समझे हुए था कि बादशाही सेना उसके मार्ग में कण्टक-स्वरूप नहीं है। किन्तु नहीं, गेरीबाल्डी की यह भूल थी, शाही सेना ने गोली दाग़ दी। इससे उसकी सेना के स्वेच्छासेवक तितर-बितर हो गये। *गेरीबाल्डी घायल हुआ और उसको गवर्नमेण्ट ने कैद कर लिया। परन्तु इतने पर भी मेज़िनी अपने कार्य की उपेक्षा नहीं करता था। वह पुनः इटली में एकता के प्रचार करने का उद्योग करने लगा। सन् १८६३ मे जब पोलेण्ड और रूस में ठनी तब फिर मेज़िनी ने अपने देशवालों को चेताया कि वेनिस पर आक्रमण करें। लोगों में जागृति के कुछ चिन्ह प्रकट होने लगे कि बादशाह ने भी मेज़िनी को एक पत्र लिख कर वेनिस पर आक्रमण करने की इच्छा प्रकट की। मेज़िनी ने उसका यह स्पष्ट उत्तर दिया कि वह न तो बादशाह पर विश्वास करता है; और न बादशाह के साथ मिलकर कार्य करना चाहता है। यदि बादशाह वेनिस पर चढ़ाई करना चाहता है तो उसे उचित है कि वेनिस-वासियो को अपने बल-भरोसे पर छोड़ दे, गेरीबाल्डी को सम्पूर्ण अधिकार दे दे। गेरीबाल्डी स्वेच्छा-सेवकों की सेना इकट्ठी करेगा और आवश्यकता के अवसर पर सहायता देगा। इस भांति मेज़िनी बादशाह की चिकनी-चुपड़ी बातों में नहीं आया। उधर बादशाह ने एक और चाल चली कि लुइस नेपोलियन और बादशाह विक्टर के बीच में एक

---

* जिसने गेरीबाल्डी पर गोली चलाई थी उसको बादशाह ने एक उच्च पद पर नियुक्त किया।

सन्धिपत्र लिखा गया। नेपोलियन ने यह प्रतिज्ञा की कि वह फ्रेञ्च सेना को रोम से हटा लेगा, लेकिन बादशाह पोप को गद्दी पर स्थिर रखेगा। टूरिन राजधानी न रहकर फ्लारेन्स रहेगी। पोप से यह भी ठहराव हो गया था कि वह सेना आदि के संगठन में कुछ हस्तक्षेप न करे। परन्तु सर्वसाधारण इस सन्धिपत्र से सन्तुष्ट नहीं हुए। क्योंकि कहा जाता है कि इस सन्धिपत्र के साथ एक और गुप्त प्रतिज्ञापत्र था, जिसमें यह ठहराव हुआ था कि शहर पेडमान्ट का बहुत सा भाग फ्रान्स को दे दिया जायगा और वेनिस में आस्ट्रिया शासन करता रहेगा। मेज़िनी ने किसी प्रकार इन सब प्रतिज्ञापत्रों की टोह लगा ली और सर्वसाधारण में इन प्रतिज्ञापत्रों की सब बातें प्रकाशित कर दीं। सर्वसाधारण में इन प्रतिज्ञापत्रों के प्रकाशित हो जाने पर इतनी हलचल मची, कि जिन मन्त्रियों के इन प्रतिज्ञापत्रों पर हस्ताक्षर कहे जाते हैं, उनको मेज़िनी के कथन का खण्डन करना पड़ा *। तीसरी फरवरी को प्रातःकाल बिना किसी सूचना के विक्टर इमानुएल को अपनी पहली राजधानी छोड़ कर फ्लारेन्स को आना पड़ा। कहते हैं, नेपोलियन के महामंत्री ने बादशाह को यहां तक धमकी दी थी कि यदि बादशाह ने पोप के राज्य की भली भांति रक्षा न की तो केवल फ्रांस ही नहीं, बल्कि यूरोप के समस्त रोमन केथोलिक उसके राज्य पर चढ़ धावेंगे। इस धमकी का बड़ा ही भयङ्कर फल हुआ। राष्ट्रीय दलवालों के साथ बड़े बड़े अत्याचारों का जो परिणाम होना चाहिये था, वही हुआ। अत्याचारों के कारण लोग विशेष उत्तेजित होगये।

---

* कोई कोई इतिहास-लेखक कहते हैं कि मेज़िनी की बात सच्ची थी। मन्त्रियों ने ही पार्लामेण्ट में सर्वसाधारण के आंदोलन के कारण झूठ बोला था।

उन्नीसवां परिच्छेद

———— :o: ————

युद्ध और वेनिस पर विजय

"पातितोऽपि करावातैरुत्पतत्येव कन्दुकः" —भर्तृहरि।

उस समय इटली-निवासी अपने कार्य की साधना में तो जुटे हुए थे ही कि परमात्मा की कृपा से एक और सुयोग प्राप्त हुआ। इस सुयोग के सम्बन्ध में यदि यह कह दिया जाय कि, बिल्ली के भाग्य से छींका टूटा तो अनुचित न होगा। इटली वेनिस की ओर ठीक वैसे ही ताक लगाये हुए था जैसे बिल्ली छींके पर रखे दूध के कटोरे की ओर आंखें लगाये रहती है। इस वर्ष प्रशिया और आस्ट्रिया में युद्ध ठन गया। मार्च मास में प्रशिया ने इटली से मित्रता कर ली, जिसमें यह ठहराव हुआ कि प्रशिया आस्ट्रिया से तब तक लड़ेगा जब तक वह वेनिस के खास शहर और किले को छोड़ कर समस्त भागों को इटली को न दे देगा। मेज़िनी भी इस अवसर पर चुप न था, उसने अखबारों में इस आशय के लेख लिखने शुरू कर दिये कि इटली-वासियों को अपने बाहुबल पर भरोसा रख कर आस्ट्रिया से युद्ध करना चाहिये, फ्रांस अथवा प्रशिया से सहायता लेना, एक प्रकार से नया झगड़ा खरीदना है। क्योंकि युद्ध की समाप्ति के पश्चात् इसके बदले में, कृतज्ञता-स्वरूप, उन्हें अवश्य कोई न कोई प्रान्त देना पड़ेगा। मेज़िनी की ये चिट्ठियां बड़ी ही जोशीली थीं। इन चिट्ठियों में उसने अपने देश-भाइयों से स्वेच्छासेवक होकर आस्ट्रिया से युद्ध करने का आदेश किया

था। इटली की सरकार मेजिनी की इन चिट्ठियों से यहां तक घबड़ाई हुई थी कि जिन समाचारपत्रों में यह चिट्ठियां प्रकाशित हुई थीं, उन पत्रों को उसने रोक दिया। परन्तु मेजिनी के विचार इटालियन सरकार के द्वारा इस भांति रोके जाने पर भी ६५ हजार स्वेच्छासेवक आ जुटे। युद्धसचिव स्वेच्छासेवकों के उत्साह और उमङ्ग को देखकर यहां तक भयभीत हुए कि उन्होंने यह कह कर सेना को टाला कि राज्य की सेना आवश्यकता से अधिक है। लोगों का उत्साह इस भांति देखकर २०वीं जून को इटली ने आस्ट्रिया से युद्ध की घोषणा कर दी। आस्ट्रिया ने १,८०,००० सैनिक द्वीप को भेजे और २७ जहाज थे। इटली ने भी तीन लाख आदमी और ३६ जहाजों का बेड़ा आस्ट्रिया के मुकाबले को भेजा। इस युद्ध में जल और थल में इटेलियन सेना की क्षति हुई; परन्तु प्रशिया ने आस्ट्रिया की सेना को विशेष पददलित कर दिया। आस्ट्रिया ने निराश होकर वेनिस प्रान्त तीसरे नेपोलियन को भेट कर दिया। इटली ने फ्रांस से वेनिस प्रान्त को प्राप्त किया। १६वीं अक्टूबर सन् १८६६ को सेन्टमार्क पर इटेलियन झण्डा फहराने लगा। ६,४७,३८४ नागरिकों ने विक्टर इमानुएल के शासन के लिये सम्मति दी, केवल ६६ सम्मतियां इसके विपरीत आई। ७वीं नवम्बर को विक्टर इमानुएल ने बड़ी धूमधाम से वेनिस में प्रवेश किया।

बीसवां परिच्छेद

—————:o:—————

आशा में निराशा

"येनैवाम्बर खंडेन संवीतो निशि चन्द्रमाः ।
तेनैव च दिवा भानुरहो दौर्गत्यमेतयोः" ॥

—भर्तृहरि

यह लोकोक्ति प्रचलित है कि "कानी के विवाह को सौ जोखौं" सो ही दशा इटली की हुई । यह सब होने पर भी रोम का प्रश्न ज्यों का त्यों बना रहा । तत्कालीन मन्त्री रिकासोली को वेनिस प्रान्त इटली की राजधानी में सम्मिलित करने का सौभाग्य प्राप्त था । परन्तु वह आस्ट्रिया से सन्धि हो जाने के पश्चात् थोड़े मास ही मन्त्री रहा । उसने रोम-दरबार से, जो धर्म-सम्बन्धी मामले थे, उनका निबटारा करना चाहा । इस निबटारे के लिये उसने चेष्टा भी की । उसने एक ऐसे कानून का मसविदा बनाया, जिसमें धर्माचार्य तथा राज्य दोनों शक्तियों को स्वतन्त्रता रहे । इस मसविदा का जन-साधारण ने प्रबल प्रतिवाद किया । अखबारों में इस मसविदे के विरोध में बहुत से लेख निकले; और बहुत सी सभाएँ इसके प्रतिवाद में हुईं । सरकार ने कितनी ही सभाएँ बन्द कर दीं, परन्तु राजसभा में मन्त्री का यह कानून पास न हो सका । इसलिये उसने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया, जो स्वीकृत होगया ।

इटली के दुर्भाग्यवश उस समय मेज़िनी और गेरीबाल्डी

में भी मतभेद हो गया था। परन्तु मेज़िनी शान्त नहीं था, वह पहले के समान ही अपनी कलम के बल से जोशीले लेखों द्वारा सर्वसाधारण में रोम के विजय करने का विचार फैला रहा था। गेराबाल्डी यही समझे हुए था कि बादशाह उसका साथ देगा। गेरीबाल्डी ने प्रथम सूचना, स्वेच्छासेवकों को इकट्ठा करने के लिये, सन् १८६७ के जुलाई मास में प्रकाशित की। जिसमें उसने रोम पर आक्रमण करने के लिये इटेलियनों से अपील की थी। उसके पश्चात् उसने १६वीं सितम्बर को एक पत्र और प्रकाशित किया। जिसमे उसने दस हजार नवयुवको से तैयार होने के लिये प्रार्थना की थी। गेरीबाल्डी की यह प्रार्थना बहरे कानों पर नहीं पड़ी।

फ्लारेन्स तथा दूसरे स्थानों में रोम राज्य पर आक्रमण करने के लिये छुपे छुपे तैयारियां होने लगीं; और बहुत से नवयुवक सीमा पर भेजे गये। गेराबाल्डी का यह अनुमान मिथ्या निकला कि बादशाह उसका साथ देगा। गेराबाल्डी फ्लारेन्स से अपनी स्वेच्छासेवक सेना की अध्यक्षता के लिये चला गया और एलेसेन्ड्रिया के किले में बन्द किया गया। परन्तु इस आकस्मिक विपत्ति के आ जाने पर भी स्वेच्छा-सेवक सेना तितत-बितर नहीं हुई, उसने अपने उद्देश्य की पूर्त्ति की ओर ध्यान रखा। स्वेच्छासेवकों की ऐसी दृढ़ता देखकर, अथवा किसी और नीतिवश, गवर्नमेएट ने गेरीबाल्डी को कैद से एक साधारण सी इस शर्त पर छोड़ दिया कि वह आगे से केपरेरा में शान्तिपूर्वक रहे। किन्तु स्वेच्छासेवक सेना गेरीबाल्डी के पुत्र, मेनोटी गेरीबाल्डी की अध्यक्षता में रोम की ओर चलने लगी। विटेरबो में गेराबाल्डी की सेना

में से दो सौ आदमियों का एक दल पहुँच गया और उसी समय दो पलटनें सीमा पर होकर निकल गईं।

१४वीं अक्टूबर को कपेरारा टापू से गेरीबाल्डी भी आकर अपने लड़के की सेना में, जो उस समय रोमेगिना में थी, सम्मिलित हुआ। गेरीबाल्डी और उसके बेटे, दोनों की सम्मिलित सेना रोम की ओर बढ़ी। इसके पश्चात् १९वीं अक्टूबर को यह भयङ्कर समाचार सुनाई पड़ा कि यदि इटालियन गवर्नमेण्ट गेरीबाल्डी के दल को रोकने की चेष्टा नहीं करेगी, तो लाचार होकर फ्रेञ्च सरकार को इसमें हस्तक्षेप करना पड़ेगा। इटालियन सरकार इस समय बड़े सङ्कट में पड़ी, "दुविधा में दोऊ गये, माया मिली न राम" उसके लिये फ्रेञ्च गवर्नमेण्ट का दमन करना, जितना कठिन था, उतना ही गेरीबाल्डियन सेना को दमन करना भी कठिन था। क्योंकि गेरीबाल्डी की सेना जल के प्रबल वेग के समान आगे बढ़ी चली जा रही थी। २५वीं अक्टूबर को गेरीबाल्डी की सेना ने पोपों के सवारों पर मोन्ट रेटूनडे पर भयङ्कर विजय प्राप्त की।

जब फ्रेञ्च सरकार ने देखा कि गेरीबाल्डी की सेना बढ़ती ही चली जा रही है तब सम्राट तीसरे नेपोलियन ने भी फ्रेंच सेना गेरीबाल्डी की स्वेच्छासेवक-सेना के मुकाबिले के लिये भेजी। दोनों सेनाओं की मुठभेड़ एक छोटे से गांव के पास हुई। यद्यपि स्वेच्छासेवकों की संख्या अधिक थी, तथापि फ्रेञ्च सेना का सङ्गठन अच्छा था, उसके पास अस्त्र-शस्त्र खूब थे, जिसके कारण फ्रेञ्च सेना के सामने स्वेच्छासेवक सेना ठहर न सकी। गेरीबाल्डी ने अपनी सेना को लौटने की आज्ञा दी। इटालियन गवर्नमेण्ट ने उसको गिरफ़ार कर लिया और जब तक शान्ति नहीं हो गई, तब तक उसको नहीं छोड़ा।

स्वेच्छासेवकों की सेना का सारा परिश्रम व्यर्थ हुआ। रोम फिर फ्रेंचों के हाथ में चला गया। राजा विक्टर इमानुएल ने इस अवसर पर दूरदर्शिता से कार्य्य किया। जहां उसने गेरीबाल्डी को गिरफ़ार किया था, वहां उसने तीसरे नेपोलियन को भी एक पत्र लिखा था, जिसमें उसने सम्राट नेपोलियन से यह अपील की थी कि वह अपने को पोपों के फन्दे से निकाल कर यूरोप के लिबरल दल का प्रधान बनावे। इस पत्र में विक्टर इमानुएल ने यह भी लिखा था कि अन्तिम घटना ने इटलीवासियों के हृदय से फ्रांस के प्रति पुरानी प्रतिज्ञा का भाव मेट दिया है। अब गवर्नमेंट की शक्ति में फ्रांस से मित्रता का निबाहना कठिन प्रतीत होता है। मेनटेना के युद्ध ने मृत्यु-सदृश धक्का पहुँचाया है।

परन्तु नेपोलियन ने बादशाह की अपील पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। सुनते हैं कि वैदेशिक विभाग के मंत्री ने कहा था:- "अब रोम इटालियन गवर्नमेंट के पास कभी नहीं रहेगा"। फ्रेञ्च मंत्री के इस कथन पर इमानुएल ने अपना बड़ा भारी अपमान समझा। उसने कहा कि "हम दिखला देंगे कि कैसे रोम फिर इटालियन गवर्नमेंट के हाथ में नहीं आवेगा"। विक्टर ने फ्रेञ्च मन्त्री के उपर्युक्त शब्दों पर इतना क्रोध प्रकट किया कि हार कर फ्रेञ्च मन्त्री को उक्त शब्दों के लिये क्षमा-प्रार्थना करनी पड़ी।

विक्टर ने इस समय पुराने मंत्रि-मण्डल के स्थान में नये मन्त्रिमण्डल का सङ्गठन किया। पुराने मन्त्रियों में से सात मन्त्री नवीन मन्त्रिमण्डल में रहे। सन् १८६६ के लगातार युद्ध से इटली की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं रही। नये

मन्त्रिमण्डल को इटली की आर्थिक स्थिति के विचार करने के लिये विक्टर ने अवसर दिया। उस समय इन युद्धों में इटली का धन बहुत सा व्यय हुआ। इसके सिवाय उस पर ऋण भी बहुत था। इटली की ऐसी आर्थिक परिस्थिति के कारण जनसाधारण और सरकार दोनों की अपरिमिति हानि हो रही थी। परन्तु मन्त्रियों की चतुरता से शीघ्र ही इटली की आर्थिक दशा सुधर गई।

इक्कीसवां परिच्छेद

—○:०:○—

रोम का पतन

"Injustice will bring down the mightiest to ruin."

Lord Salisbury.

रोम का भी अन्त समय आ पहुँचा। बड़े बड़े अत्याचार करनेवालों के हृदय भी न्याय के ज़रा से पत्ते के खटकने पर ही दहल जाते हैं; परन्तु अब तो इटली में अन्याय के कटीले वृक्षों के उखाड़ने के लिये प्रचण्ड आंधी चल चुकी थी। ऐसी दशा में भला फिर कब तक पोप धांधल मचाता रहता? जिन शासनों की नींव अन्याय और अत्याचारों पर होती है, वे चाहे जितने बलवान् और सुदृढ़ क्यों न हों, पर अन्त में न्याय और सत्य के सामने वे नहीं टिकते हैं। बस पोपों के अत्याचारों की भी सीमा समाप्त हो चुकी थी।

जिन दिनों पार्लमेण्ट इटली की आर्थिक स्थिति के सुधार में लग रही थी, उन दिनों तत्कालीन इटालियन मन्त्री मेनेवेरा ने फ्रेञ्च सरकार से रोम में से फ्रेञ्च सेना हटाने का अनुरोध किया। इटालियन मन्त्री ने फ्रेञ्च सरकार को यह भी आश्वासन दिया था कि पोप को धार्मिक स्वतन्त्रता पूरी रहेगी और पोप के ऋण में से बहुत से भाग का भार इटली ले लेगा। ऐसा करने से इटली में सर्वत्र शान्ति छा जायगी। राजविद्रोहसम्बन्धी आन्दोलन सब अस्त हो जायँगे। गुप्त सभाएं आदि सब

बंद हो जायँगी। इन उत्पातों का नाम-निशान भी नहीं रहेगा फ्रेञ्च सरकार मेनेवेरा को सम्मति से सहमत नहीं हुई और मेनेवेराने अपनी बात चलतो न देख कर सन् १८६६ में मार्च के अन्त में अपने पद का परित्याग कर दिया । इस बीच में और भी बहुत सी बातें दोनों ओर हुईं, पर कुछ फल न हुआ। अन्त में सन् १८७० में जुलाई मास के बीच में जर्मनी और फ्रांस में लड़ाई चेत गई। इस लड़ाई का चेतना ही इटली के भाग्य में छींका टूटने की कहावत के अनुसार हुआ । इस युद्ध के कारण फ्रेञ्च गवर्नमेण्ट के सारे हौसले टूट गये। "मेरे मन कुछ और है, कर्त्ता के मन और"। फ्रेञ्च गवर्नमेण्ट जो कुछ सोचे हुई थी, उसके विपरीत हुआ। फ्रेञ्च गवर्नमेण्ट, इस युद्ध के चेत जाने से, पोप की संरक्षकता नहीं कर सकी। लाचार होकर उसको अपनी सेना वहां से हटानी पड़ी । अपनी लोकलज्जा रखने के लिये फ्रेञ्च सरकार ने सेना हटाते समय बड़ी बड़ी लम्बी बातें बनायीं। जैसे एक लोमड़ी को अंगूर हाथ न आने से सारे अगूर खट्टे मालूम होने लगे, वैसे ही उस समय फ्रेञ्च सरकार को रोम मे सेना हटाते समय बहुत से बहाने बनाने पड़े। दूसरे राष्ट्रों के सामने उसकी हँसी न हो, अन्य शक्तियां उसका उपहास न करें—इसलिये उसने एक युक्ति चली, और वह युक्ति यह थी कि सेना को हटाते समय फ्रेञ्च गवर्नमेण्ट ने कहा था कि हम १५वीं सितम्बर के कोनवेंशन में प्रदर्शित राजभक्ति पर विश्वास करके अपनी सेना हटाते हैं। ठीक ही है, "दबी बिल्ली चूहों से कान कटाती है"। फ्रेञ्च गवर्नमेंट की इस लाचारी उदारता को देखकर विक्टर इमानुएल ने अपने हाथ से एक पत्र लिख कर पोप के पास अपना राजदूत भेजा। उस पत्र में विक्टर इमानुएल ने पोप को पूजनीय

पिता और अपने को पुत्र कह कर सम्बोधन किया था। इस पत्र का आशय यह था कि वह राजकीय सेना को, जो रोम के बाहर स्थित है, रोम में प्रवेश करने दे और रोम राज्य में पोप के अधिकार और शान्ति की रक्षा के लिये रहने दे। पोप ने राजा का यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। उसने ११वीं सितम्बर सन् १८७० को जो पत्र बादशाह को भेजा, उसमें उक्त प्रस्ताव को स्पष्ट अस्वीकार किया। अन्त में लाचार होकर गवर्नमेंट ने अपने जनरल रेफेऐली केडोरेना को अपनी सेना सहित सीमा पार करने की आज्ञा दी। और उसी समय यूरोप के अन्य राज्यों को गश्ती चिट्ठी भेज कर सूचित किया कि रोम का इटालियन राज्य में शान्ति और प्रेमपूर्वक सम्मिलित होना असम्भव है। इस चिट्ठी में यूरोप की शक्तियों को यह भी विश्वास दिलाया गया था कि पोप की धार्मिक स्वतन्त्रता पूर्णतया स्थिर रखी जायगी। ११वीं सितम्बर को केडोरेना ने पोप के राज्य में प्रवेश किया और १९वीं सितम्बर को रोम के परकोटे के पास पहुँच गया। इटालियन सेना के आगमन की बात सुनकर नवें पायस पोप ने भी बादशाही सेना के मुकाबिले की ठानी। उसने अपनी सेना के सेनापति को जो चिट्ठी भेजी थी, उसमें लिखा था कि रोम के परकोटे की दीवाल थोड़ी सी टूटने पर भी बादशाही सेना का सामना करना चाहिये; और हुआ भी ऐसा ही। २१वीं सितम्बर को इटालियन सेना ने पाया और सोरालारा तथा सेण्ट जौन और सेण्ट पेनकारस दरवाजों के बीच में तोपें दागनी शुरू कर दीं। रोम का इस भांति पतन होते देखकर पोप की सेना ने अग्नि बरसाना बन्द कर दिया; और अपने तोपखानों पर सफेद झंडा फहरा दिया। पोप ने एक दूत केडोरेना के पास भेजा और शीघ्रता से यह

निश्चय हो गया कि रोम केवल *लेनाईन शहर को छोड़ कर सब समर्पण कर देगा। यह निश्चय होजाने पर पोप की सेना युद्ध-सम्मान से सम्मानित की गई, पर साथ ही उन्हें अपने झण्डे और हथियार रखने के लिये लाचार किया गया। जो कृषक सिपाही होकर आये थे, वे अपने घर भेज दिये गये और सब विदेशी सैनिकों को इटालियन सरकार ने अपने खर्च से उनके घर भेज दिया। इस भांति बेचारे रोम का पतन हुआ। जिस पोप का एक दिन यूरोप भर में आतङ्क छा रहा था, जिसको लोग केवल इस लोक का ही राजा नहीं, परलोक का भी समझते थे, जिसके इशारे पर यूरोप की जनता नाचती थी, जिसके चरणों में बड़े बड़े सम्राट अपने मस्तक नवाने में अपने को गौरवान्वित समझते थे, उसका क्षय होते होते इतना होगया कि वह केवल एक साधारण ठाकुर के अतिरिक्त और कुछ नहीं रहा। हमारे अनेक सहृदय पाठक पोप की इस दशा पर कहेंगे कि यह समय का फेर है, भाग्य की बात है, होनी को कौन टाल सकता है, अथवा यह दैवगति है—ऐसा विचार करनेवाले प्यारे पाठको! यह विधि का विधान नहीं है। भाग्य, होनी अथवा दैवगति सब कर्मों के सामने नहीं

---

* किसी किसी इतिहासलेखक के कथन से ज्ञात होता है कि इटली को यह जीत महँगी पड़ी थी। सुबह साढ़े पाँच बजे से दस बजे तक अग्निवर्षा होती रही। दस बजकर दस मिनट पर सफेद झण्डा फहराया गया। इस युद्ध में दोनों ओर से कितने मनुष्य मारे गये, इसका ठीक पता नहीं लगता है। इटालिअन सेना का कथन था कि केवल ३२ आदमी उसकी ओर के मारे गये और १४३ आदमी घायल हुए और कुछ लोगों ने लगभग दो हज़ार जनसंख्या की हानि का अनुमान किया था। जो कुछ हो, लगातार प्रयत्न करने से अन्त में इटलीनिवासियों को सफलता प्राप्त हुई।

टिकते हैं। प्रत्येक राष्ट्र अपने कर्मों से ही बनता-बिगड़ता है। इसी लिये तो राजर्षि भर्तृहरि ने स्पष्ट कहा है कि भाग्य अथवा दैवगति कर्मों के अधीन है। रोम के पतन होने का कारण भी पोपों के कर्म थे—और उनके वे कर्म थे जिनको लोग सहन करने को तैयार नहीं थे। अन्याय के कटीले वृक्ष चाहे जितने सुदृढ़ क्यों न हों; किन्तु वे न्याय और सत्य रूपी पवन के सामने ठहर नहीं सकते हैं। यही कारण है कि पोप-साम्राज्य का पतन हुआ। अज्ञानरूपी तिमिर का क्षय हुआ, भला तब ऐसी दशा में पोप का शासन कब तक ठहर सकता था—"सत्य का बोलबाला और झूठे का मुंह काला" यही बात हुई।

बाइसवां परिच्छेद

—— . ० ——

रोम पर अधिकार

"Unselfish work lays God under debt, and God is bound to pay back with interest."

—Swami Ram Tirth.

प्रयत्न कभी निष्फल नहीं जाता है। सफलता उद्योग की दासी है। विना परिश्रम और स्वार्थत्याग किये सफलता की आशा करना ठीक वैसाही है जैसे प्यासा कुआं पर बैठा हुआ विना पानी खींचे अपनी प्यास बुझाने की लालसा रखता हो। कहने का तात्पर्य्य यह है कि बिना चेष्टा के, केवल कल्पनाओं के भरोसे, कभी सफलता प्राप्त नहीं होती है। परमात्मा उसी की सुनते है जिसका अपने ऊपर भरोसा होता है। इटली-निवासियों के लगातार प्रयत्न का फल यह हुआ कि उनको चिरभिलषित स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। केवल विदेशियों के पञ्जे से ही उनका छुटकारा नहीं हुआ, किन्तु पोप के भी अज्ञानरूपी जाल से उन्हें मुक्ति प्राप्त हुई। स्वाधीनता प्राप्त होने के साथ ही साथ रोम पर भी उनकी विजय-पताका फहराने लगी। सच है, उद्योग और परिश्रम के सामने असम्भव भी सम्भव है। इटली के अनेक निःस्वार्थ व्यक्तियों के आत्मत्याग के कारण विजयलक्ष्मी उनपर प्रसन्न हुई।

जनरल केडोरेना ने रोम पर केवल विजयपताका फहरा कर ही अपने पवित्र कर्त्तव्य की पूर्त्ति नहीं समझी; किन्तु उसने

पहले राज्य की कुछ व्यवस्था की, फिर उसने वहां के राजमहलों के निवासियों से लेकर झोपड़ों के रहनेवाले तक सर्वसाधारण से सम्मति पूछी कि वे किस प्रकार का राज्य चाहते हैं—वे पोप की अधीनता में रहना चाहते हैं अथवा राजा विक्टर इमानुएल की अध्यक्षता में ? इस प्रकार की सम्मति संग्रह करने के लिये दूसरी अक्टूबर नियत हुई । सच है, लोकप्रियता केवल विजय के साथ ही निवास करती है ।

पोप से विजयलक्ष्मी पहले ही रूठ चुकी थी, साथ ही लोग उसके अत्याचारों से भी दुःखी थे । बस, फिर कहना ही क्या था ! ४०,७८८ सम्मतियां विक्टर इमानुएल के शासन के पक्ष में आईं और ४६ पोप के लिये आईं । वाह रे संसार ! किसी मनुष्य की अवस्था बदलते ही, सभी उसके प्रतिकूल हो जाते हैं सङ्कट के समय में, बिगड़ी के दिनों में, मित्र भी शत्रु हो जाते हैं । आपत्ति-काल में कोई किसी का मित्र नहीं रहता है । कहा जाता है, जब भगवान् रामचन्द्रजी लङ्का विजय कर के अयोध्या को लौट रहे थे, तब उन्होंने विभीषण से पूछा थाः—“ हे विभीषण ! क्या कारण है जब हम अयोध्या से बन को गये थे तब मार्ग में किसी ने हमारा आदर-सत्कार नहीं किया था, किन्तु आज अयोध्या जाते समय सभी लोग हमारा बड़ा स्वागत कर रहे हैं” ? विभीषण ने भगवान् रामचन्द्रजी के उपर्युक्त प्रश्न का जो उत्तर दिया था, वह प्रत्येक राष्ट्र और व्यक्ति के सम्बन्ध में हर समय ठीक प्रतीत होता है । विभीषण ने उस समय कहा थाः-राजन् ! मनुष्य के शरीर की पूजा नहीं होती है, उसकी स्थिति पूजनीय होती है । यह अवस्था-भेद है । उस समय आप बन को जा रहे थे, इस समय आप राजधानी अयोध्यापुरी का राज्य करने के लिये जा रहे हैं” । विभीषण के

उपर्युक्त कथन का अक्षर अक्षर सत्य है। अवस्था-भेद से ही मनुष्य पूजनीय अथवा निन्दनीय होता है।

पोप के पक्ष में थोड़े दिन पहले, जिन सैकड़ों हजारों आदमियों ने अस्त्र-शस्त्र ग्रहण किये थे, जो पोप के पक्ष में अपने प्राण तक देने को तैयार थे, जिन्होंने कुछ दिन पहले ही पोप के अधिकार की रक्षा के लिये अपना रक्त बहाया था, और रक्त बहाने में सौभाग्य समझते थे, उन्होंने ही पोप की अवस्था बदल जाने पर उसके शासन में रहना स्वीकार नहीं किया! पोप के शासन का रोम में अन्त हुआ।

पांचवीं एप्रिल सन् १८७१ को चेम्बर ने निश्चय किया कि पोप पवित्र था। उसको राजधानी में उसका राजकाय सम्मान प्राप्त है। उसे ३,२२,५०० इटालियन मुद्रा वार्षिक दान मिला करेगा। इसके अतिरिक्त वेटीकन और लेटेरन आसपास के महल उसे मिलेंगे। पोप को धार्मिक कार्यों में पूरी स्वतन्त्रता होगी। पोप को विदेशी राजदूतों से, अन्तर्जातीय रीति के अनुसार, सब अधिकार प्राप्त होंगे। शिक्षण तथा धार्मिक संस्थाएँ पोप की अध्यक्षता में स्वतन्त्र रहेंगी। इसके अतिरिक्त पोप को थोड़ी-बहुत और भी सुविधाएँ प्राप्त हुईं। इसके बाद फिर विक्टर इमानुएल, इटलीनिवासियों और पोप में कोई झगड़ा नहीं हुआ।

* दूसरी जून सन् १८७१ को बादशाह विक्टर ने राजधानी रोम में प्रवेश किया। इटली-वासी भाई भाई के गले मिले।

---

* बादशाह के रोम में जाने से एक वर्ष पहले सन् १८७० में टाइबर नदी मे बाढ़ आने से बड़ी हानि हुई थी। पादरियों ने इसको परमेश्वर

रोम में एकतादेवी की उपासना आरम्भ हुई। चाण्डालिनी फूट का बहिष्कार हुआ। इटली के निःस्वार्थ सेवकों ने अपनी जननी जन्मभूमि की परतन्त्रता की बेड़ी तोड़ने में जो कष्ट उठाये थे, उनका फल प्राप्त हुआ। स्वाधीनता-देवी रक्त की प्यासी है। इटली-निवासियों ने अपना रक्त बहाकर उसकी प्यास बुझाई। उन्होंने स्वतन्त्रतादेवी के चरणों में आत्मबलि प्रदान की। इटली के स्वदेशभक्तों की आत्मबलि से स्वतन्त्रता-देवी प्रसन्न हुई। भगवान् की कृपा से आज इटली की गणना स्वतन्त्र राज्यों में ही नहीं; शक्तिशाली शक्तियों में भी है। स्वर्गीय स्वामी रामतीर्थजी ने ठीक कहा है—"जो बिना किसी स्वार्थ से काम करते हैं उनका ऋण परमात्मा पर होजाता है और परमात्मा भी व्याज-सहित उस ऋण को चुकाते हैं" इटली-निवासियों ने स्वतन्त्रता के लिये, बिना

का कोप बतलाया। परन्तु बादशाह घटनास्थल पर स्वयं गया। बादशाह के इस व्यवहार से पोप के कट्टर से कट्टर पक्षपाती बादशाह के अनुयायी होगये थे।

(१) विक्टर इमानुएल द्वितीय का देहान्त सन् १८७७ में हुआ। उसी वर्ष थोड़े दिन पीछे पोप पायस नवें का देहान्त होगया। पोप ने बादशाह विक्टर की मृत्यु पर अत्यन्त दुःख प्रकट किया और कहा कि वह सच्चा ईसाई था। बादशाह और पोप दोनों की समाधि एक ही स्थान में है। इमानुएल द्वितीय की मृत्यु के पीछे राजा हम्बर्ट प्रथम राजा हुआ। सन् १९०० में अराजक ब्रेस्की ने राजा हम्बर्ट की हत्या की। उसकी मृत्यु के पीछे वर्त्तमान नरेश विक्टर इमानुएल तृतीय राज-सिंहासन पर बैठा। उसका जन्म सन् १८६९ ई० की ११वीं नवम्बर को और विवाह सन् १८९६ के अक्टूबर मास में मण्टोनीग्रो की प्रिंसेस हेलन के साथ हुआ।

किसी स्वार्थ के, चेष्टा की थी, परमात्मा की कृपा से इटली की पराधीनता की बेड़ी ही नहीं टूटी, किन्तु उसे परमेश्वर ने रोम भी ब्याज में दिया। परमात्मा ने जिस भांति इटली के दिन फेरे, वैसे ही सब किसी के फेरे !

स्वाधीनतादेवी ! तुझे बारबार नमस्कार है, तेरी सुशीतल छाया में कौन नहीं बैठना चाहता है ? जीव-जन्तु से लेकर मनुष्य तक सभी प्राणी तेरी सुशीतल छाया में बैठना चाहते हैं, पर तेरी उपासना और पूजा कठिन है। तब ही तो कवि कहता है:—

"पराधीनता दुख महा सुख जग में स्वाधीन ।
सुखी रमत सुक बन-बिखै कनक पींजरे दीन ।"